कबीरवचनामृत।

[कबीर जी की वह वाणी जो आज तक नहीं छपी]

लेखक—

पं० ओंकारनाथ भारद्वाज हिन्दी प्रभाकर,

टीचर गवर्नमैण्ट कालेज

कैम्बलपुर।

मोतीलाल बनारसीदास,

संस्कृत-हिन्दी पुस्तक विक्रेता,

सैदमिट्ठा बाज़ार, लाहौर

सन् १९३४ मूल्य १)

प्रकाशक—
सुन्दरलाल जैन
पंजाब संस्कृत पुस्तकालय,
सैदमिट्ठा बाज़ार लाहौर।

मुद्रक—
दुर्गादास प्रभाकर
मैनेजर बम्बई संस्कृत प्रेस
सैदमिट्ठा बाज़ार लाहौर।

भूमिका

श्री कबीर जी महाराज की वाणी अमृतमयी है जो कि भक्तों के मन में उल्लास तथा आनन्द उत्पन्न करती है क्योंकि कबीर जी स्वयम् ईश्वर के परम भक्त थे और वे उस ईश्वर को मानने वाले थे जिस ने नृसिंहावतार लेकर प्रह्लाद की रक्षा की थी उस ने ध्रुव को अटल पदवी दी थी जिसका शिव और सनकादि ध्यान करते हैं। उनकी सुधा समान वाणी को मैंने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब से संग्रह किया है मेरी पुस्तक का आधार श्री गुरु ग्रन्थ साहिब ही है और जो वाणी मैंने लिखी है वह सब की सब श्री गुरुग्रन्थ साहिब में विद्यमान है किन्तु हिन्दी क्षेत्र में अभीतक नहीं पहुंची। गुरुमुखी भाषा में होने के कारण हिन्दी पढ़ी-लिखी जनता इस अमृतमयी वाणी से वञ्चित थी और दीर्घ काल से लोगों की अभिलाषा थी कि इस वाणी को हिन्दी का वेष धारण कराया जाय ताकि भारतवर्ष के समस्त प्रान्तों के लोग इस से लाभ उठा सकें इस लिए मैंने लोगों का अनुराग और प्रेम देख कर गुरुमुखी वाणी को हिन्दी के आभूषणों से भूषित कर के हरिभक्तों की सेवा में भेंट किया है। कबीर जी की समस्त वाणी की संख्या ५४० है जो कि पृथक् पृथक् रागों मे सन्निविष्ट है। मैंने केवल २४५ श्लोक और १३४ शब्द इस पुस्तक में लिखे हैं। पुस्तक के आकार के बढ़ जाने के भय से और समय के अभाव के डर से मैं कबीर जी की शेष वाणी नहीं लिख सका और सम्पूर्ण जीवन चरित्र भी नहीं लिख सका। ये दोनों बातें मैं किसी आगामी समय के लिए छोड़ता हूं और पाठकों से क्षमा चाहता हूं कि वे मेरी इस त्रुटि की ओर ध्यान न देकर जिस कदर अमृत-मयी वाणी उन को अर्पण की गई है उस का पान करें।

अन्तिम प्रार्थना ।

अन्त में मैं श्री गुरु अर्जुनदेव जी महाराज पञ्चम गुरु जी का हार्दिक धन्यवाद् करता हूं कि जिन्होंने कबीर जी की वाणी को श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में सन्निविष्ट कर के इस वाणी को अटल तथा सुरक्षित कर दिया है संसार भर में किसी मनुष्य की सामर्थ्य नहीं कि इस पवित्र वाणी में हस्ताक्षेप कर सके श्री गुरु ग्रन्थ साहिब से बाहर जितनी वाणी कबीर जी की है उस में यदि कोई व्यक्ति परिवर्तन करना चाहे तो कर सकता है किन्तु गुरु ग्रन्थ साहिब में हस्तक्षेप करना मनुष्य की शक्ति के बाहर है श्री कबीर जी के अनुयाइयों और कबीर पथावलम्बियों के लिये उचित है कि वे श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की इस ईश्वरीय वाणी का यथोचित मान करें और श्री गुरु ग्रन्थ साहिब को ही अपना धार्मिक ग्रन्थ समझें क्योंकि इस में उन के पूज्य आचार्य की वाणी सुरक्षित की हुई है और इस वाणी के आधार से कबीर जी का शुद्ध जीवन चरित्र तैयार किया जा सकता है श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी से अतिरिक्त कबीर जी की किसी और वाणी को मैं कदापि परमाणिक मानने के लिए तैयार नहीं हूं क्योंकि बाहर की वाणी में परिवर्तन की सम्भावना हो सकती है और श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में परिवर्तन करना अत्यन्त कठिन तथा असम्भव है कबीर जी ने और भी बहुत सी वाणी रची है जो कि गुरु ग्रन्थ साहिब से बाहर है । कबीर जी महाकवि थे उनके ७५ ग्रन्थ इस समय प्राप्य हैं ।

ओंकारनाथ भारद्वाज ।

सलोक भगत कबीर जीउ के

१ ओं सतिगुर प्रसादि

कबीर मेरी सिमरनी, रसना ऊपरि रामु ।
आदि जुगादि सकल भगत, ताको सुखु बिस्रामु ॥ १ ॥
कबीर मेरी जाति कउ, सभु को हसने हारु ।
बलिहारी इस जाति कउ, जिह जपियो सिरजनहारु ॥२॥
कबीर डगमग किआ करहि, कहा डुलावहि जीउ ।
सरब सूख को नाइको, राम नामु रसु पीउ ॥ ३ ॥
कबीर कंचन के कुंडल बने, ऊपरि लाल जड़ाउ ।
दीसहि दाधे कान जिउ, जिन मनि नाही नाउ ॥ ४ ॥
कबीर ऐसा एकु आधु, जो जीवत म्रितकु होइ ।
निरभै होइ कै गुन रवै, जत पेखउ तत सोइ ॥ ५ ॥
कबीर जा दिन हउ मूआ, पाछै भइआ अनन्दु ।
मोहि मिलिओ प्रभु आपना, संगी भजहि गोविंद ॥६॥
कबीर सब ते हम बुरे, हम तजि भलो सभु कोइ ।
जिनि ऐसा करि बूझिआ, मीतु हमारा सोइ ॥ ७ ॥
कबीर आई मुझहि पहि, अनिक करे करि भेसु ।
हम राखे गुर आपने, उन कीनो आदेसु ॥ ८ ॥
कबीर सोई मारीऐ, जिह मूऐ सुखु होइ ।
भलो भलो सब को कहै बुरो न मानै कोइ ॥ ९ ॥

कबीर राती होवहि कारीआ, कारे ऊभे जंत ।
लै फाहे उठ धावते, सि जानि मारे भगवंत ॥ १० ॥
कबीर चंदन का बिरवा भला, बेड़ियो ढाक पलास ।
ओइ भी चन्दनु होइ रहे, बसे जु चन्दनु पासि ॥ ११ ॥
कबीर बांसु बड़ाई बूडिआ, इउ मत डूबहु कोइ ।
चन्दन के निकटे बसै, बांसु सुगंधु न होइ ॥ १२ ॥
कबीर दीनु गवाइआदुनी सिउ, दुनी न चाली साथि ।
पाई कुहाड़ा मारिआ, गाफल अपुनै हाथ ॥ १३ ॥
कबीर जह जह हउ फिरिउ, कउतक ठाओ ठाइ ।
इक राम सनेही बाहिरा, ऊजरू मेरै भाइ ॥ १४ ॥
कबीर सन्तन की झुंगीआ भली, भठि कुसत्ती गाउ ।
आगि लगउ तिह धउलहर, जिह नाही हरि को नाउ १५
कबीर संत मूए किआ रोईए, जो अपुने ग्रिहि जाइ ।
रोवहु साकत बापुरे, जु हाटै हाट बिकाइ ॥ १६ ॥
कबीर साकत ऐसा है, जैसी लसन की खानि ।
कोने बैठे खाईऐ, परगट होइ निदान ॥ १७ ॥
कबीर माइआ डोलनी, पवनु झकोलन हारु ।
संतहु माखनु खाइआ, छाछ पीऐ संसारु ॥ १८ ॥
कबीर माइआ डोलनी, पवनु बहै हिव धार ।
जिन बिलोइआ तिनि खाइआ, अवर बिलोवनहार ॥१९॥
कबीर माइआ चोरटी, मुसि मुसि लावै हाटि ।
एकु कबीरा न मुसै, जिनि कीनी बारह बाट ॥ २० ॥

कबीर सूख न एह जुगु, करहि जु बहुते मीतु ।
जो चित राखहि एक सिउ, ते सुख पावहि नीतु ॥ २१ ॥
कबीर जिसु मरनै ते जग डरै, मेरे मन आनंदु ।
मरने ही ते पाईऐ, पूरनु परमानन्दु ॥ २२ ॥
राम पदारथु पाइकै, कबीरा गांठि न खोलु ।
नही पटणु नही पारखू, नही गाहकु नही मोलु ॥ २३ ॥
कबीर ता सिउ प्रीति कर, जाको ठाकुर राम ।
पंडित राजे भूपति, आवहि कउने काम ॥ २४ ॥
कबीर प्रीति इक सिउ किए, आन दुविधा जाइ ।
भांवै लांबे केस करु, भावै घररि मुडाइ ॥ २५ ॥
कबीर जग काजल की कोठरी, अंध परे तिस माहि ।
हउ बलिहारी तिन कउ, पैसि जु नीकसि जाहि । २६ ॥
कबीर इह तनु जाइगा, सकहु त लेहु बहोरि ।
नांगे पावहु ते गऐ, जिनके लाख करोरि ॥ २७ ॥
कबीर इह तनु जाइगा, कवनै मारगि लाइ ।
कै संगति कर साधकी, कै हरि के गुन गाइ ॥ २८ ॥
कबीर मरता मरता जगु मूआ, मरि भी न जानिआ कोइ ।
ऐसे मरने जो मरै, बहुरि न मरना होइ ॥ २९ ॥
कबीर मानसु जनमु दुलंभ है, होइ न बारै बार ।
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि, बहुरि न लागहि डार ॥३०
कबीरा तुही कबीरू तू, तेरो नाउ कबीरु ।
रामरतनु तब पाईऐ, जउ पहिले तजहि सरीरु ॥ ३१ ॥

कबीर झंखु न झंखीऐ, तुमरो कहिउ न होइ ।
करम करीम जु करि रहे, मेटि न साकै कोइ ॥ ३२ ॥
कबीर कसउटी राम की, झूठा टिकै न कोइ ।
राम कसउटी सो सहै, जो मरिजीवा होइ ॥ ३३ ॥
कबीर ऊजल पहिरहि कापरे, पान सुपारी खाहि ।
एकस हरि के नाम बिनु, बांधे जमपुरि जाहि ॥ ३४ ॥
कबीर बेड़ा जरजरा, फूटे छेक हजार ।
हरुए हरुए तिरि गए, डूबे जिन सिर भार ॥ ३५ ॥
कबीर हाड जरे जिउ लाकरी, केस जरे जिउ घासु ।
इहु जग जरता देखिकै, भइउ कबीरू उदासु ॥ ३६ ॥
कबीर गरबु न कीजीऐ, चाम लपेटे हाड ।
हैवर ऊपर छत्र तर, ते फुनि धरनी गाड ॥ ३७ ॥
कबीर गरबु न कीजीऐ, ऊचा देखि अवासु ।
आजु कालि भुइ लेटणा, ऊपरि जामै घासु ॥ ३८ ॥
कबीर गरबु न कीजीऐ, रंकु न हसिऐ कोइ ।
अजहु सुनाउ समुद्र महि, किआ जानउ किआ होइ ॥३९॥
कबीर गरबु न कीजीऐ, देही देखि सुरंग ।
आजु कालि तजि जाहुगे, जिउ कांचुरी भुयंग ॥ ४० ॥
कबीर लूटना है त लुटि है, राम नाम है लूटि ।
फिरि पाछै पछुताहुगे, प्रान जाहिगे छूटि ॥ ४१ ॥
कबीर ऐसा को न जनमिओ, अपने घरि लावै आगि ।
पांचउ लरिका जारि कै, रहे राम लिव लागि ॥ ४२ ॥

को है लरका बेचई, लरिकी बेचै कोइ ।
साझा करै कबीर सिउ, हरि संगि बनजु करेइ ॥ ४३ ॥
कबीर इह चेतावनी, मत सहसा रहि जाइ ।
पाछै भोग जु भोगवै, तिनको गुड़ लै खाहि ॥ ४४ ॥
कबीर मैं जानिउ पड़िबो भलो, पड़िबे सिउ भल जोगु ।
भगति न छाडउ राम की, भावै निंदउ लोगु ॥ ४५ ॥
कबीर लोगु कि निंदै बपुड़ा, जिह मनि नाही गिआनु ।
राम कबीरा रवि रहे, अवर तजे सब काम ॥ ४६ ॥
कबीर परदेसी कै घाघरै, चहु दिसि लागी आगि ।
खिंथा जल कोइला भई, तागे आंच न लाग ॥ ४७ ॥
कबीर खिंथा जल कोइला भई, खापर फूटम फूट ।
जोगी बपुड़ा खेलिउ, आसनि रही बिभूति ॥ ४८ ॥
कबीर थोरे जलि माछुली, झीवर मेलिओ जालु ।
इह टोघनै न छुटसहि, फिरि करि समुंदु समालि ॥४९॥
कबीर समुंदु न छोडीऐ, जउ अति खारो होइ ।
पोखरि पोखरि ढूंढते, भलो न कहि है कोइ ॥ ५० ॥
कबीर निगुसाईएं बहि गए, थांघी नाही कोइ ।
दीन गरीबी आपुनी, करते होइ सु होइ ॥ ५१ ॥
कबीर बैसनउ की कूकरि भली; साकत की बुरी माइ ।
ओहु नित सुनै हरि नाम जस, ओह पाप बिसाहन जाइ ॥५२।
कबीर हरना दूबला, इहु हरीआरा तालु ।
लाख अहेरी एकु जीउ, केता बंचउ कालु ॥ ५३ ॥

कबीर गङ्गा तीर जु घरु करहि, पीवहि निरमल नीरु ।
बिन हरि भगत न मुकति होइ, इउ कहि रमे कबीर ॥५४॥
कबीर मनु निरमलु भइआ, जैसा गंगा नीरु ।
पाछै लागो हरि फिरै, कहत कबीर कबीरु ॥ ५५ ॥
कबीर हरदी पीअरी, चूंनां ऊजल भाइ ।
राम सनेही तउ मिलै, दोनउ बरन गवाइ ॥ ५६ ॥
कबीर हरदी पीरतनु हरै, चून चिहन न रहाइ ।
बलिहारी इह प्रीति कउ, जिह जाति बरनु कुलु जाइ ॥५७॥
कबीर मुकति दुआरा संकुरा, राई दसएँ भाइ ।
मनु तउ मैगलु होइ रहिउ, निकसो किउकै जाइ ॥ ५८ ॥
कबीर ऐसा सतिगुरू जे मिले, तुठा करे पसाउ ।
मुकति दुआरा मोकला, सहजे आवउ जाउ ॥ ५९ ॥
कबीर न मोहि छानि न छापरी, न मोहि घर नहि गाउ ।
मत हरि पूछै कउनु है, मेरे जाति न नाउ ॥ ६० ॥
कबीर मुहि मरने का चाउ है, मरउ त हरि के दुआर ।
मत हरि पूछै कउन है, परा हमारै बार ॥ ६१ ॥
कबीर ना हम कीआ न करहिगे, न करि सकै सरीरु ।
किआ जानउ किछु हरि कीआ, भइउ कबीरु कबीरु ॥६२॥
कबीर सुपनै हू बरड़ाइकै, जिह मुख निकसै रामु ।
ताके पग की पानहीं, मेरे तनु को चामु ॥ ६३ ॥
कबीर माटी के हम पूतरे, मानस राखिउ नाउ ।
चारि दिवस के पाहुने, बड बड रूंधहि ठाउ ॥ ६४ ॥

कबीर महिदी कर घालिआ, आपु पिसाइ पीसाइ ।
तै सह बात न पूछीऐ, कबहु न लाई पाइ ।। ६५ ।।
कबीर जिह दर आवत जाति अहु, हटकै नाही कोइ ।
सो दर कैसे छोडीऐ, जो दरू ऐसा होइ ।। ६६ ।।
कबीर डूबा था पै उबरिउ, गुनकी लहरि झबकि ।
जब देखिउ बेड़ा जरजरा, तब उतरि परिउ हउ फरकि ।।६७
कबीर पापी भगति न भावई हरि पूजा न सुहाइ ।
माखी चंदनु परहरै, जह बिगंध तह जाइ ।। ६८ ।।
कबीर बैदु मूआ रोगी मुआ, मूआ सबु संसारु ।
एक कबीरा न मूआ, जिह नाही रोवनहार ।। ६९ ।।
कबीर राम न धिआइओ, मोटी लागी खोरि ।
काइआ हांडी काठ की, न उह चरै बहोरि ।। ७० ।।
कबीर ऐसी होइ परी, मनको भावत कीन ।
मरने ते किआ डरपना, जब हाथ सधउरा लीन ।। ७१ ।।
कबीर रस को गांडो चूसीऐ, गुन कउ मरीऐ रोइ ।
अवगुनीआरे मानसै, भलो न कहि है कोइ ।। ७२ ।।
कबीर गागरि जल भरी, आजु कालि जैहै फूटि ।
गुरु जु चेतहि आपनो, अध मझाली जहिगे लूटि ।।७३।।
कबीर कूकरु राम को, मुतीआ मेरो नाउ ।
गले हमारे जेवरी, जह खिंचै तह जाउ ।। ७४ ।।
कबीर जपनी काठ की, किआ दिखलावहि लोइ ।
हिरदै रामु न चेतही, इह जपनी किआ होइ ।। ७५ ।।

कबीर बिरहु भुयंगमु मन बसै, मन्तु न मानै कोइ।
राम बिओगी न जीऐ, जीऐ तो बउरा होइ॥ ७६ ॥
कबीर पारस चन्दनै, तिन है एक सुगन्ध।
तिह मिलि तेऊ ऊतम भए, लोह काठ निरगन्ध॥ ७७ ॥
कबीर जम का ठेंगा बुरा है, ओहु नही सहिआ जाइ।
एक जु साधू मोहि मिलिओ, तिन लीआ अंचल लाइ॥७८
कबीर वैदु कहै हउ ही भला, दारु मेरै वसि।
इह तउ बसतु गुपाल की, जब भावै ले खसि॥ ७६ ॥
कबीर नउबति आपनी, दिन दस लेहु बजाइ।
नदी नाव संजोगजिउ, बहुरि न मिलि है आइ॥ ८० ॥
कबीर सात समुन्दहि मसु करउ, कलम करउ बनराइ।
वसुधा कागदु जउ करउ, हरि जसु लिखनु न जाइ॥८१॥
कबीर जाति जुलाहा किआ करे, हिरदै बसे गुपाल।
कबीर रमईआ कंठ मिलु, चूकहि सरब जंजाल॥ ८२ ॥
कबीर ऐसा को नहीं, मन्दर देइ जराइ।
पांचउ लरिके मारि कै, रहै राम लिउ लाइ॥ ८३ ॥
कबीर ऐसा को नही, इह तन देवे फूकि।
अंधा लोगु न जानई, रहिओ कबीरा कूकि॥ ८४ ॥
कबीर सती पुकारै चिह चड़ी, सुनहो बीर मसान।
लोगु सबाइआ, चालि गइओ, हम तुम कामु निदान॥८५
कबीर मनु पंखी भइओ, उड उड दह दिस जाइ।
जो जैसी संगति मिलै, सो तैसो फलु खाइ॥ ८६ ॥

कबीर जा कउ खोजते, पाइओ सोई ठउरु ।
सोइ फिरि कै तू भइआ, जा कउ कहता अउरु ॥ ८७ ॥
कबीर मारी मरउ कुसंग की, केले निकटि जु बेरि ।
उहु झूलै उहु चीरीए, साकत संगु न हेरि ॥ ८८ ॥
कबीर भार पराई सिरि चरै, चलिओ चाहै बाट ।
अपने भारहि न डरै, आगै अउघट घाट ॥ ८९ ॥
कबीर बन की दाधी लाकरी, ठाढ़ी करै पुकार ।
मति बसि परउ लुहार के, जारै दूजी बार ॥ ९० ॥
कबीर एक मरन्ते दुइ मूए, दोइ मरन्तह चारि ।
चारि मरन्तह छह मूए, चारि पुरख दुइ नारि ॥ ९१ ॥
कबीर देखि देखि जगु ढूंढिआ, कहुं न पाइआ ठौरु ।
जिनि हरि का नामु न चेतिओ, कहा भुलाने अउरु ॥९२॥
कबीर संगति करीऐ साध की, अंति करै निरबाहु ।
साकत संग न कीजीऐ, जाते होइ बिनाहु ॥ ९३ ॥
कबीर जग महि चेतिओ जानिकै, जग महि रहिओ समाइ
जिनि हरि का नामु न चेतिओ, बादहि जनमे आइ ॥९४॥
कबीर आसा करीऐ राम की, अवरै आस निरास ।
नरकि परहिते मानई, जो हरि नाम उदासु ॥ ९५ ॥
कबीर सिख साखा बहुते किए, केशो किओ न मीतु ।
चाले थे हरि मिलन कउ, बीचै अटकिओ चीतु ॥ ९६ ॥
कबीर कारनु बपुरा किआ करै, जउ रामु न करै सहाइ ।
जिह जिह डाली पगु धरऊ, सोई मुरि मुरि जाइ ॥ ९७ ॥

कबीर अवरह कउ उपदेश ते, मुख में परिहै रेत ।
रासि बिरानी राखते, खाया घर का खेत ॥ ९८ ॥
कबीर साधू की संगति रहउ, जउ की भूसी खाउ ।
होनहारु सो होइ है, साकत संगि न जाउ ॥ ९९ ॥
कबीर संगति साध की, दिन दिन दूना हेतु ।
साकत कारी कांबरी, धोए होए न सेतु ॥ १०० ॥
कबीर मनु मूंडिआ नही, केस मुंडाए काइ ।
जो किछु कीआ सु मन कीआ, मूंडा मूंडु अजाइ ॥१०१॥
कबीर रामु न छोड़ीऐ, तनु घनु जाइ त जाउ ।
चरनकमल चितु बेधिआ, रामहि नामि समाउ ॥ १०२ ॥
कबीर जो हम जंतु बजावते, टूटि गई सब तार ।
जंतु बिचारा किआ करै, चले बजावनहार ॥ १०३ ॥
कबीर माइ मूंडउ तिह गुरू की, जाते भरमु न जाई ।
आप डूबे चहु वेद महि, चेले दीए बहाइ ॥ १०४ ॥
कबीर जेते पाप कीऐ, राखे तलै दुराइ ।
परगट भए निदान सभ, जब पूछै धरमराइ ॥ १०५ ॥
कबीर हरि का सिमरनु छाडिकै, पालिओ बहुत कुटंबु ।
धंधा करता रहि गइआ, भाई रहिआ न बंधु ॥ १०६ ॥
कबीर हरि का सिमरनु छाडिकै, राति जगावन जाइ ।
सरपन होइ कै अउतरै, जाए अपुने खाइ ॥ १०७ ॥
कबीर हरि का सिमरनु छाडिकै, अहोई राखै नारि ।
गदही होइकै अउतरै, भार सहै मन चारि ॥ १०८ ॥

कबीर चतुराई अति घनी, हरि जपि हिरदै माहि ।
सूरी ऊपरि खेलना, गिरै त ठाहर नाहि ॥ १०९ ॥
कबीर सोई मुखु धंनि है, जा मुखु कहीऐ रामु ।
देही किसकी बापुरी, पवित्र होइगो ग्रामु ॥ ११० ॥
कबीर सोई कुल भली, जा कुल हरि को दासु ।
जिह कुल दासु न उपजै, सो कुल ढाकु पलासु ॥ १११ ॥
कबीर है गइ बाहन सघन घन, लाख धुजा फैहराइ ।
इश्रा सुखते भिच्छा भली, जउ हरि सिमरत दिन जाहि ११२
कबीर सबु जगु हउ फिरश्रो, मांदलु कंध चढ़ाइ ।
कोई काहू को नही, सभ देखि ठोकि बजाइ ॥ ११३ ॥
मारगि मोती बीथरे, श्रंधा निकसिश्रो श्राइ ।
जोति बना जगदीश की, जगतु उलंघे जाइ ॥ ११४ ॥
बूडा बंसु कबीर का, उपजिश्रो पूतु कमालु ।
हरि का सिमरनु छाडिकै, घर ले श्राया मालु ॥ ११५ ॥
कबीर साधू कउ मिलने जाईऐ, साथि न लीजै कोइ ।
पाछै पाउ न दीजीऐ, श्रागै होइ सो होइ ॥ ११६ ॥
कबीर जगु बाधिश्रो जिह जेवरी, तिह मत बंधहु कबीर ।
जैहहि श्राटा लोन जिउ, सोन समानि शरीर ॥ ११७ ॥
कबीर हंस उडिश्रो तन गाडिश्रो, सोझाई सैनाह ।
श्रजहू जीउ न छोडई रंकाई नैनाह ॥ ११८ ॥
कबीर नैन निहारउ तुझ कउ स्रवन सुनउ तुश्र नाउ ।
बैन उचरउ तुश्र नाम की, चरन कमल रिद ठाउ ॥११९॥

कबीर सुरग नरकते मै रहिओ, सतिगुर के परसादि ।
चरनकमल की मउज महि, रहउ अंति अरु आदि ॥१२०॥
कबीर चरन कमल की मउज को, कहि कैसे उनमानु ।
कहिबे कउ शोभा नहीं देखा ही परवानु ॥ १२१ ॥
कबीर देखि कै किह कहउ, कहे न को पतीआइ ।
हरि जैसा तैसा उही, रहउ हरखि गुन गाइ ॥ १२२ ॥
कबीर चुगै चितारै भी चुगै, चुगि चुगि चितारे ।
जैसे बचरहि कूंज मन, माइआ ममतारे ॥ १२३ ॥
कबीर अंबर घनहरु छाइया, बरखि भरे सर ताल ।
चात्रिक जिउ तरसत रहै, तिन को कउनु हवालु ॥१२४॥
कबीर चकई जउ निसि वीछुरै, आइ मिलै परभाति ।
जो नर बिछुरे राम सिउ, ना दिन मिले न राति ॥१२५॥
कबीर रैनाइर बिछोरिआ, रहु रे शंख मझूरि ।
देवल देवल धाहड़ी, देसहि उगावत सूर ॥ १२६ ॥
कबीर सूता किआ करहि, जागु रोइ भै दुखु ।
जाका बासा गोर महि, सो किउ सोवै सुखु ॥ १२७ ॥
कबीर सूता किआ करहि, उठि कि न जपहि मुरारि ।
इक दिन सोवनु होइगो, लांबे गोड पसारि ॥ १२८ ॥
कबीर सूता किआ करहि, बैठा रहु अरु जागु ।
जाके संग ते बीछुरा, ताहि के संगि लागु ॥ १२९ ॥
कबीर सन्त की गैल न छोडीए, मारगि लागा जाउ ।
पेखत ही पुनीत होइ, भेटत जपीऐ नाउ ॥ १३० ॥

कबीर साकत संगु न कीजीऐ, दूरहि जाइऐ भागि ।
बासन कारो परसीऐ, तउ कछु लागै दागु ॥ १३१ ॥
कबीर रामु न चेतीओ, जरा पहूचिओ आइ ।
लागी मंदर दुआर ते, अब किआ काढिआ जाइ ॥१३२॥
कबीर कारनु सो भइओ, जो कीनो करतार ।
तिस बिनु दूसर को नहीं, एको सिरजनहार ॥ १३३ ॥
कबीर फल लागे फलनि, पाकन लागे आंब ।
जाइ पहूचहि खसम कउ, जउ बीच न खाही कांब ॥१३४॥
कबीर ठाकुरु पूजहि मोलि ले, मन हठ तीरथ जाहि ।
देखा देखी स्वांग धरी, भूले भटका खाहि ॥ १३५ ॥
कबीर पाहन परमेसुरु कीआ, पूजै सबु संसारु ।
इस भरवासे जो रहे, बूडे कालीधार ॥ १३६ ॥
कबीर कागद की ओबरी, मसुके करमु कपाट ।
पाहन बोरी पिरथमी, पंडित पाड़ी बाट ॥ १३७ ॥
कबीर कालि करंता अबहि करु, अब करता सुइताल ।
पाछै कछु न होइगा, जउ सिर पर आवै काल ॥ १३८ ॥
कबीर ऐसा जंतु इक देखिआ, जैसी धोई लाख ।
दीसै चंचलु बहुगुना, मतिहीना नापाक ॥ १३९ ॥
कबीर मेरी बुधि कउ, जमु न करै तिसकार ।
जिन इह जमुआ सिरजिआ, सु जपिआ परविदगार ॥१४०॥
कबीर कसतूरी भइआ, भवर भए सभ दास ।
जिउ जिउ भगति कबीर की, तिउ तिउ रामु निवासु ॥१४१

कबीर गहगचि परिओ कटुंब कै, कांठै रहि गइओ रामु ।
आइ परे धरमराइ के, बीचहि धूमा धाम ॥ १४२ ॥
कबीर साकत ते शूकर भला, राखै आछा गाउ ।
उहु साकतु बपुरा मरि गइआ, कोइ न लेहै नाउ ॥१४३॥
कबीर कउड़ी कउड़ी जोरि के, जोरे लाख करोरि ।
चलती बार न कछु मिलिओ, लई लंगोटि तोरि ॥१४४॥
कबीर बैसनो हुआ त किआ भइआ, माला मेली चारि ।
बाहरि कंचनु बारहा, भीतरि भरी भंगार ॥ १४५ ॥
कबीर रोड़ा हो रहु बाट का, तजि मन का अभिमानु ।
ऐसा कोइ दासु होइ, ताहि मिलै भगवानु ॥ १४६ ॥
कबीर रोड़ा हूआ त किआ भइआ, पंथी कउ दुखु देइ ।
ऐसा तेरा दासु है, जिउ धरनी महि खेह ॥ १४७ ॥
कबीर खेह हूई तउ किआ भइआ, जउ उडि लागै अंग ।
हरिजन ऐसा चाहीऐ, जिउ पानी सरबंग ॥ १४८ ॥
कबीर पानी हूआ त किआ भइआ, सीरा ताता होइ ।
हरिजन ऐसा चाहीऐ, जैसा हरि ही होइ ॥ १४९ ॥
ऊच भवन कन कामनी, सिखरि धजा फहराइ ।
ताते भली मधूकरी, संत संग गुन गाइ ॥ १५० ॥
कबीर पाटन ते ऊजरु भला, राम भगत जिह ठाइ ।
राम सनेही बाहरा, जमपुर मेरे भाइ ॥ १५१ ॥
कबीर गंग जमुन के अंतरे, सहज सुंन के घाट ।
तहा कबीरै मटुकीआ, खोजत मुनि जन बाट ॥ १५२ ॥

कबीर जैसी उपजी पेड ते, जउ तैसी निबहै ओड़ि ।
हीरा किसका बापुरा, पुजहि न रतन करोड़ि ॥ १५३ ॥
कबीरा एक अचंभउ देखिओ, हीरा हाट बिकाइ ।
बनजनहारे बाहरा, कउडी बदलै जाइ ॥ १५४ ॥
कबीर जहा गिआनु तह धरमु है, जहा झूठु तह पापु ।
जहा लोभु तह कालु है, जहा खिमा तह आपि ॥ ११५ ॥
माइआ तजि त किआ भइआ, जउ मानु तजिआ नही जाइ
मान मुनी मुनिवर गले, मानु सभै कउ खाइ ॥ १५६ ॥
कबीर साचा सतिगुरु मै मिलिआ, सबदु जु बाहिआ एकु ।
लागत ही भुइ मिलि गइआ, परिआ कलेजे छेकु ॥१५७॥
कबीर साचा सतिगुरु किआ करै, जउ सिखा माहि चूक ।
अंधे एक न लागई, जिउ बांस बजाई फूक ॥ १५८ ॥
कबीर है गै बाहन सघन घन, छत्रपती की नारि ।
तासु पटंतर ना पुजै, हरिजन की पनिहारि ॥ १५९ ॥
कबीर त्रिपनारी किउ निंदीऐ, किउ हरि चेरि को मानु ।
ओहु मांग सवारे बिखै कउ, ओह सिमरै हरि नामु ॥१६०॥
कबीर थूनी पाई थिति भई, सतिगुरु बन्धी धीर ।
कबीर हीरा बनजिआ, मान सरोवर तीर ॥ १६१ ॥
कबीर हरि हीरा जन जउहरी, लेकै मांडै हाट ।
जब हि पाईअहि पारखू, तब हीरन की साट ॥ १६२ ॥
कबीर काम परे हरि सिमरीऐ, ऐसा सिमरो नित ।
अमरापुर बासा करहु, हरि गइआ बहोरै बित ॥ १६३ ॥

कबीर सेवा कउ दुइ भले, एकु सन्तु एकु रामु ।
रामजु दाता मुकति को, संतु जपावै नामु ॥ १६४ ॥
कबीर जिह मारगि पंडित गये, पाछै परी बहीर ।
इक अवघट घाटी राम की, तिह चड़ि रहिओ कबीर १६५
कबीर दुनीआ के दोखे मूआ, चालत कुल की कानि ।
तब कुलु किसका लाजसी, जब ले धरहि मसानि ॥१६६॥
कबीर डूबहिगो रे बापुरे, बहु लोगन की कानि ।
पारोसी के जो हूआ, तू अपने भी जानु ॥ १६७ ॥
कबीर भली मधूकरी, नाना विधि को नाजु ।
दावा काहू को नहीं, बडा देस बड राजु ॥ १६८ ॥
कबीर दावै दाझनु होत है, निरदावै रहे निसंक ।
जो जनु निरदावै रहै, सो गनै इन्द्र को रंक ॥१६९॥
कबीर पालि समुहा सरवर भरा, पी न सकै कोई नीरु ।
भाग बड़े ते पाइओ, तु भरि भरि पीउ कबीर ॥ १७० ॥
कबीर परभाते तारे खिसहि, तिउ इहु खिसै सरीरु ।
ए दुइ अखर ना खिसहि, सा गहि रहिओ कबीरु ॥१७१॥
कबीर कोठी काठ की, दह दिसि लागी आगि ।
पंडित पंडित जलि मूए, मूरख उबरे भागि ॥ १७२ ॥
कबीर संसा दूरि करु, कागद देइ बिहाइ ।
बावन अखर सोधि कै, हरि चरनी चितु लाइ ॥ १७३ ॥
कबीर संतु न छाडै सन्तई, जउ कोटिक मिलहि असंत ।
मलिआगरु भुयंगम बेढ़िओ, त शीतलता न तजंत ॥१७४

कबीर मनु शीतलु भइआ, पाइआ ब्रह्म गिआनु ।
जिनि जुआला जगु जारिआ, सु जन के उदक समानि १७५
कबीर सारी सरजनहार की, जाने नाही कोइ ।
कै जानै आपन धनी, कै दास दीवानी होइ ॥ १७६ ॥
कबीर भला भई जो भउ परा, दिसा गई सभ भूलि ।
ओरा गरि पानी भइआ, जाइ मिलिओ ढलि कूलि ॥१७७
कबीर धूरि सकेल कै, पुरीआ बांधी देह ।
दिवस चारि को पेखना, अंत खेह की खेह ॥ ९७८ ॥
कबीर सूरज चांद कै उदै भई सभ देह ।
गुरु गोविंद के बिनु मिले, पलट भई सभ खेह ॥ ९७९ ॥
जह अनभउ तह भै नही, जह भउ तह हरि नाहि ।
कहिओ कबीर बिचारि कै, संत सुनहु मन माहि ॥ १८० ॥
कबीर जिनहु कछु जानिआ नही, तिन सुख नीद बिहाइ ।
हमहु जु बूझा बूझना, पूरी परी बलाइ ॥ १८१ ॥
कबीर मारे बहुतु पुकारिआ, पीर पुकारै और ।
लागी चोट परंम की, रहिओ कबीरा ठौर ॥१८२॥
कबीर चोट सुहेली सेल की, लागत लेइ उसासु ।
चोट सहारै सबद की, तासु गुरु मै दास ॥ १८३ ॥
कबीर मुलां मुनारे किआ चढहि, साईं न बहरा होइ ।
जा कारनि तू बांग देहि, दिल ही भीतरि जोइ ॥ १८४ ॥
शेख सबूरी बाहरा, किआ हज काबे जाइ ।
कबीर जा का दिल साबति नही, ता कउ कहां खुदाइ १८५

कबीर अलह की करि बंदगी, जिह सिमरत दुखु जाइ ।
दिल महि साई परगटै, बुझै बलंती नाइ ॥ १८६ ॥
कबीर जोरी किये जुलम है, कहता नाउ हलाल ।
दफतर लेखा मंगीऐ, तब होइगो कउनु हवाल ॥ १८७ ॥
कबीर खूब खाना खीचरी, जामहि अंम्रितु लोनु ।
हेरा रोटी कारने, गला कटावै कउनु ॥ १८८ ॥
कबीर गुरु लागा तब जानीए, मिटे मोहु तन ताप ।
हरख सोग दाझै नहीं, तब हरि आपहि आप ॥ १८९ ॥
कबीर रामु कहन महि भेदु है ता मै एक बिचारु ।
सोई राम सभै कहहि, सोई कौतकहार ॥ १९० ॥
कबीर रामै राम कहु, कहिबे माहि बिबेक ।
एकु अनेकहि मिलि गइआ, एक समाना एक ॥ १९१ ॥
कबीर जा घर साध न सेवीअहि, हरि की सेवा नाहि ।
ते घर मरहट सारखे, भूत बसहि तिन माहि ॥ १९२ ॥
कबीर गूंगा हूआ, बावरा हूआ कानु ।
पावहु ते पिंगल भइआ, मारिआ सतिगुर बानु ॥१९३॥
कबीर सतगुरु सूरमे, बाहिआ बान जु एकु ।
लागत ही भुइ गिरि परिआ करेजे छेकु ॥ १९४ ॥
कबीर निरमल बूंद अकाश की, पर गई भूमि बिकार ।
बिन संगति इओ मानई, होइ गई भठ छार ॥ १९५ ॥
कबीर निरमल बूंद अकाश की, लीनी भूमि मिलाइ ।
अनिक सिआने पचि गए, ना निरवारी जाइ ॥ १९६ ॥

कबीर जह काबे हउ जाय था, आगे मिलिआ खुदाइ ।
साईं मुझ सिउ लरिपरिआ, तुझै किनि फरमाई गाइ ॥१६७
कबीर हज काबै होइ होइ गइआ, केती बार कबीर ।
साईं मुझ महि किआ खता, मुखहु न बोले पीर ॥१६८।
कबीर जीअ जु मारहि जोरु करि, कहते हहि जु हलाल ।
दफतरु दई जब काढ़ि है, होइगा कउनु हवाल ॥ १६६ ॥
कबीर जोरु किआ सो जुलम है, लेइ जवाबु खुदाइ ।
दफतर लेखा नीकसे, मार मुहै मुहि खाइ ॥ २०० ॥
कबीर लेखा देना सुहेला, जउ दिल सूची होइ ।
उस साचे दीवान महि, पला न पकरै कोइ ॥ २०१ ॥
कबीर धरती अरु अकाश महि, दुइ तूंबरी अबध ।
खट दरसन संसे परे, अरु चौरासीह सिध ॥ २०२ ॥
कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा ।
तेरा तुझ कउ सउपते, किआ लागे मेरा ॥ २०३ ॥
कबीर तूं तूं करता तू हुआ, मुझ महि रहा न हूं ।
जब आपा पर पर मिटि गइआ, जत देखउ तत तूं ॥२०४॥
कबीर विकारह चितवते, झूठे करते आस ।
मनोरथु कोइ न पूरिओ, चालै ऊठि निरास ॥ २०५ ॥
कबीर हरि का सिमरनु जो करै, सो सुखीआ संसारि ।
इत उत कतहि न डोलई, जिस राखै सिरजनहार ॥२०६॥
कबीर घाणी पीड़ते, सतिगुर लीए छडाइ ।
परा पूरबली भावनी, परगट होई आइ ॥ २०७ ॥

कबीर टालै टोलै दिनु गइआ, बिआजु बढंतउ जाइ ।
ना हरि भजिउ न खतु फाटिओ, काल पहुंचो आइ ॥२०८
कबीर कूकरु भउकना करंग, पीछै उठि धाइ ।
करमी सतिगुरु पाइआ, जिनि हउ लीआ छुडाइ ॥२०९॥
कबीर धरती साधकी, तसकर बैसहि गाहि ।
धरती भारि न बिआपई, उनकउ लाहू लाहि ॥ २१० ॥
कबीर चावल कारने, तुख कउ मुहली लाइ ।
संगि कुसंगी बैसते, तब पूछै धरमराइ ॥ २११ ॥
नामा माइआ मोहिआ, कहै तिलोचन मीतु ।
काहे छीपहु छाइलै, रामु न लावहु चीतु ॥ २१२ ॥
नामा कहै तिलोचना मुख ते राम समालि ।
हाथ पाउ करि काम सभु, चीतु निरंजन नालि ॥२१३॥
कबीरा हमरा को नही हम किसहू के नाहि ।
जिन इहु रचन रचाइआ, तिस ही माहि समाहि ॥२१४॥
कबीर कीचड़ि आटा गिरि परिआ, किछू न आइओ हाथ
पीसत पीसत चाबिआ, सोइ निबहिआ साथ ॥ २१५ ॥
कबीर मनु जानै सभ बात, जानत ही अउगनु करै ।
काहे की कुशलात हाथु दीप कूए परै ॥ २१६ ॥
कबीर लागी प्रीति सुजान सिउ, बरजे लोगु अजानु ।
तासिउ टूटी किउ बनै, जाके जीअ परान ॥ २१७ ॥
कबीर कोठे मंडप हेतु कर, काहे मरहु सवारि ।
कारजु साढ़े तीन हथ, घनी त पउने चारि ॥ २१८ ॥

कबीर जो मैं चितवउ ना करै, किआ मेरे चितवे होइ ।
अपना चितविआ हरि करै, जो मेरे चिति न होइ ॥२१९॥

म: ३

चिंता भी आप कराहसी, अचिंतु भि आपे देइ ।
नानक सो सालाहीऐ, जि सभना सार करेइ ॥ २२० ॥

म: ५

कबीर रामु न चेतिओ, फिरिआ लालच माहि ।
पाप करता मरि गइआ, औध पुनी खिन माहि ॥२२१॥
कबीर काइआ काची कारवी, केवल काची धातु ।
सावतु रखहि त राम भजु, नाहि त बिनठी बात ॥२२२॥
कबीर केसो केसो कूकिए, न सोईऐ असार ।
राति दिवस के कूकने, कबहू के सुनै पुकार ॥ २२३ ॥
कबीर काइआ कजली बन भइआ, मनु कुंचरु मय मंतु ।
अंकसु ग्यानु रतनु है, खेवटु विरला संतु ॥ २२४ ॥
कबीर रामु रतनु मुखु कोथरी, पारख आगे खोलि ।
कोई आइ मिलैगो गाहकी, लेगो महगे मोलि ॥ २२५ ॥
कबीर राम नामु जानिओ नही, पालिओ कटकु कुटंबु ।
धंधे ही महि मरि गइओ, बाहरि भई न बंब ॥ २२६ ॥
कबीर आखी केरे माटुके, पलु पलु गई बिहाइ ।
मनु जंजालु न छोडई, जम दीआ दमामा लाइ ॥२२७॥
कबीर तरवर रूपी रामु है फल रूपी बैरागु ।
छाइआ रूपी साधु है, जिन तजिआ बादु बिबादु ॥२२८॥

कबीर ऐसा बीजु बोइ, बारह मास फलंत ।
शीतल छाइआ गहिर फलु, पंखी केल करंत ॥ २२६ ॥
कबीर दाता तरवर दइआ फलु उपकारी जीवंत ।
पंखी चलै दिसावरी, बिरखा सुफल फलंत ॥ २३० ॥
कबीर साधू संगु परापती, लिखिआ होइ लिलाट ।
मुकति पदारथु पाईऐ, ठाक न अवघट घाट ॥ २३१ ॥
कबीर एक घड़ी आधी घड़ी, आधी हूं ते आध ।
भगतन सेती गोशटे, जो कीने सो लाभ ॥ २३२ ॥
कबीर भांग माछुली सुरापानि, जो जो प्रानी खाहि ।
तीरथ बरत नेम कीऐ, ते सभै रसातल जाहिं ॥ २३३ ॥
नीचे लोइन करि रहउ, ले साजन घट माहि ।
सब रस खेलउ पीअ सो, किसी लखावो नाहि ॥ २३४ ॥
आठ जाम चउसठि घरी, तुअ निरखत रहै जीउ ।
नीचे लोइन किउ करउ, सभ घट देखउ पीउ ॥ २३५ ॥
सुनु सखी पीअ महि जीउ बसै, जीअ मै बसै कि पीउ ।
जीउ पीउ बूझउ नहीं, घट महि जीउ कि पीउ ॥ २३६ ॥
कबीर बामनु गुरु है जगत का, भगतन का गुरु नाहि ।
अरझि उरझि कै पचि मूआ, चारों वेदों माहि ॥२३७॥
हरि है खांडु रेतु महि बिखरी, हाथी चुनी न जाइ ।
कहि कबीर गुर भली बुझाई, कीटी होइ कै खाइ ॥२३८॥
कबीर जो तुहि साध पिरंम की, सीस काटिकरि गोइ ।
खेलत खेलत हाल करि, जो किछु होइ त होइ ॥ २३६ ॥

कबीर जउ तुह साध पिरंम की, पाके सेती खेलु ।
काची सरसउ पेलि कै, ना खलि भई न तेलु ।। २४० ।।
ढूंढत डोलहि अंध गति, अरु चीनत नाही संत ।
कहि नामा किउ पाईऐ, बिनु भगतहु भगवंतु ।। २४१ ।।
हरि सो हीरा छाडिके, करहि आन की आस ।
ते नर दोजक जाहिगे, सति भाखै रविदास ।। २४२ ।।
कबीर जउ ग्रिहु करहि त धरमु करु, नही त करु बैरागु ।
बैरागी बंधन करै, ता को बड़ो अभागु ।। २४३ ।।

सूचना—

इन श्लोकों के अतिरिक्त मारूराग में दो और श्लोक भी कबीर जी के हैं, जो निम्न लिखित हैं—

गगन दमामा बाजिओ, परिओ नीशाने घाउ ।
खेत जु मांडिओ सूरमा, अब जूझन को दाउ ।।२४४।।
सूरा सो पहचानीऐ, जु लरै दीन के हेत ।
पुरजा पुरजा कटि मरै, कबहु न छाडै खेतु ।। २४५ ।।

द्वितीय भाग

कबीरदास जी की बाणी ।

(१)

ईश्वर का विराट्-स्वरूप ।

(भैरव)

कोटि सूर जा कै प्रकास ।
   कोटि महांदेव अरु कबिलास ।
दुरगा कोटि जा के मरदनु करै ।
   ब्रहमा कोटि बेद उचरै ॥ १ ॥
जउ जाचउ तउ केवल राम ।
   आन देव सिउ नाही काम ॥ १ ॥
रहाउ
कोटि चंद्रमे करहि चराक ।
   सुर तेतीसउ जेवहि पाक ॥
नव ग्रहि कोटि ठाढ़े दरबार ।
   धरम कोटि जाके प्रतिहार ॥ २ ॥
पवन कोटि चउबारे फिरहि ।
   बासक कोटि सेज बिसथरहि ॥
समुंद कोटि जाके पानीहार ।
   रोमावलि कोटि अठारहि भार ॥ ३ ॥

कोटि कुमेर भरहि भंडार ।
कोटिक लखमी करै सीगार ॥
कोटिक पाप पुंन बहु हिरहि ।
इंद्र कोटि जाकै सेवा करहि ॥ ४ ॥
छपन कोटि जाके प्रतिहार ।
नगरी नगरी खिअत अपार ॥
लट छूटी वरतै विकराल ।
कोटि कला खेलै गोपाल ॥ ५ ॥
कोटि जग जा कै दरबार ।
गंध्रब कोटि करहि जैकार ॥
बिदिआ कोटि सभै गुण कहै ।
तउ पारब्रहम का अंतु न लहै ॥ ६ ॥
बावन कोटि जा कै रोमावली ।
रावन सैना जह ते छली ॥
सहस कोटि बहु कहत पुरानु ।
दुरजोधन का मथिआ मानु ॥ ७ ॥
कंद्रप कोटि जा कै लवै न धरहि ।
अंतरि अंतरि मनसा हरहि ॥
कह कबीर सुनि सारिगपान ।
देहि अभै पदु मांगउ दानु ॥८॥ ॥२॥ ॥१८॥ २०

(२)

परमेश्वर का महत्व ।

(धनासरी)

सनक सनंद महेश समानां ।
शेषनाग तेरो मरमु न जानां ॥ १ ॥
संत संगति रामु रिदै बसाई ॥ १ ॥
रहाउ
हनूमान सरि गरुड़ समानां ।
सुरपति नरपति नही गुन जानां ॥ २ ॥
चारि वेद अरु सिम्रिति पुरानां
कमलापति कवला नहीं जानां ॥ ३ ॥
कहि कबीर सो भरमै नाही ।
पग लगि राम रहै शरनाही ॥४॥१॥

(३)

भगवान् से प्रार्थना ।

(बिलावल)

दरमादे ठाढे दरबारि
तुझ बिनु सुरति करै को मेरी
दरशनु दीजै खोलि किवार ॥ १ ॥
रहाउ
तुम धन धनी उदार तिआगी
श्रवनन सुनीअतु सु जसु तुमार ।
मागउ काहि रंक सभ देखउ
तुमही ते मेरो निसतारु ॥ १ ॥

जैदेउ नामा बिप सुदामा
तिन कउ क्रिपा भई है अपार ॥
कहि कबीर तुम संमरथ दाते
चारि पदारथ देत न बार ॥२॥७॥

(४)

भगवान् से प्रार्थना ।

(आसा)

सुतु अपराध करत है जेते ।
जननी चीति न राखसि तेते ॥ १ ॥
रामईआ हउ बारकु तेरा
काहे न खडसि अवगुनु मेरा ॥ १ ॥
रहाउ
जे अति क्रोप करे करि धाइआ ।
तो भी चीति न राखसि माइआ ॥ २ ॥
चिंत भवन मनु परिओ हमारा ।
नाम बिना कैसे उतरसि पारी ॥ ३ ॥
देहि विमल मति सदा शरीरा ।
सहजि सहजि गुन रवै कबीरा ॥४॥३॥१२॥

(५)

हरि नाम ही सर्वस्व है ।

भैरव

इहु धनु मेरे हरि को नाउ ।

गांठि न बाधउ बेचि न खाउ ॥ १ ॥

रहाउ

नाउ मेरे खेती नाउ मेरे बारी ।

भगति करउ जनु सरनि तुमारी ॥ १ ।

नाउ मेरे माइआ नाउ मेरे पूंजी ।

तुमहि छोडि जानउ नही दूजी ॥ २ ॥

नाउ मेरे बंधपि नाउ मेरे भाई ।

नाउ मेरे संगि अंति होइ सखाई ॥ ३ ॥

माइआ महि जिसु रखै उदासु ।

कह कबीर हउ ताको दासु ॥४॥२॥

(६)

रामदर्शन ।

[बिभास प्रभाती]

मरन जीवन की शंका नासी ।

आपन रंगि सहज परगासी ॥ १ ॥

प्रगटी जोति मिटिआ अंधिआरा ।

राम रतनु पाइआ करत बीचारा ॥ १ ॥

रहाउ

जह अनंदु दुख दूरि पइआना ।

मनु मानकु लिव ततु लुकाना ॥ २ ॥

जो कछु होआ सु तेरा भाणा ।

जो इव बूझै सु सहजि समाणा ॥ ३ ॥

कहतु कबीर किलबिख गए खीणा ।
मनु भइआ जगजीवन लीणा ॥४॥१॥

(७)

ईश्वरलीला ।

सारङ्ग

राजा श्रम मिति नही जानी तेरी ।
तेरे संतन की हउ चेरी ॥ १ ॥

रहाउ

हसतो जाइ सु रोवतु आवै रोवतु जाइ सु हसै ।
बसतो होइ होइ सो ऊजरु ऊजरु होइ सु बसै ॥ १ ॥
जल ते थल करि थल ते कूआ कूप ते मेरु करावै ।
धरती ते आकाश चढ़ावै चढ़े आकाश गिरावै ॥ २ ॥
भेखारी ते राज करावै राजा ते भेखारी ।
खल मूरख ते पंडित करिबो पंडित ते मुगधारी ॥ ३ ॥
नारी ते जौ पुरख करावै पुरखन ते जो नारी ।
कहु कबीर साधु को प्रीतमु तिसु मूरति बलिहारी ॥४॥२॥

(८)

रामनाम जपने का उपदेश ।

भैरव

गुर सेवा ते भगति कमाई ।
तब इह मानस देही पाई ॥
इस देही कउ समरहि देव ।

सो देही भजु हरि की सेव ॥
भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु ।
मानस जनम का एही लाहु ॥ १ ॥
रहाउ
तब लगु जरा रोग नहीं आइआ ।
जब लगु काल ग्रसी नही काइआ ॥
जब लगु बिकल भई नही बानी ।
भजि लैहि रे मन सारिगपानी ॥ २ ॥
अब न भजसि भजसि कब भाई ।
आवै अंतु न भजिआ जाई ।
जो किछु करहि सोई अब सारु ।
फिरि पछुताहु न पावहु पारु ॥ ३ ॥
सो सेवकु जो लाइआ सेव ।
तिन ही पाए निरंजन देव ॥
गुरु मिलि ताके खुले कपाट ।
बहुरि न आवै जोनी बाट ॥ ४ ॥
इही तेरा अउसरु इह तेरी बार ।
घट भीतरि तू देखु बिचारि ॥
कहत कबीर जीति कै हारि ।
बहु बिधि कहिओ पुकारि पुकारि ॥५॥१॥९॥

(६)

रामनाम जपने का उपदेश ।

(धनासरी)

राम सिमरि राम सिमरि राम सिमरि भाई।
राम नाम सिमरन बिनु बूडते अधिकाई ॥ १ ॥

रहाउ

बनिता सुत देह ग्रेह संपति सुखदाई।
इन मै कछु नाहि तेरो काल अवध आई ॥ १ ॥
अजामल गज गनिका पतित करम कीने।
तेऊ उतरि पारि परे राम नाम लीने ॥ २ ॥
शूकर कूकर जोनि भ्रमे तउ लाज न आई।
राम नाम छाडि अंम्रित काहे बिखु खाई ॥ ३ ॥
तजि भरम करम विधि निखेध राम नामु लेही।
गुर प्रसादि जन कबीर रामु करि सनेही ॥४॥५॥

(१०)

रामनाम जपने का उपदेश

(सूही)

अवतरि आई कहा तुम कीना।
राम को नामु न कबहू लीना ॥ १ ॥
राम न जपहु कवन मति लागे।
मरि जइबे कउ किआ करहु अभागे ॥

रहाउ

दुख सुख करिकै कुटंबु जीवाइआ।
मरती बार इक सर दुखु पाइआ ॥ २ ॥

कंठ गहन तब करन पुकारा ।
कहि कबीर आगे ते न संमारा ॥३॥१॥

(११)

वैराग्य

(बिलावल)

ग्रिहु तजि बनखंड जाईऐ चुनि खाईऐ कंदा ।
अजहु विकार न छोडई पापी मनु मंदा ॥ १ ॥
किउ छूटउ कैसे तरउ भवजल निधि भारी ।
राखु राखु मेरे बीठुला जनु शरनि तुम्हारी ।

रहाउ

बिखै बिखै की बासना तजीअ नह जाई ।
अनिक जतन करि राखीऐ फिरि फिरि लपटाई ॥२॥
जरा जीवन जोबनु गइआ किछु किआ न नीका ।
इहु जीअरा निरमोल को कउडी लगि मीका ॥३॥
कहु कबीर मेरे माधवा तू सरब बिआपी ।
तुम समसरि नाही दइआलु मोहि समसरि पापी ४।२॥

(१२)

वैराग्य

सारङ्ग

हरि बिनु कउनु सहाई मन का ।
मात पिता भाई सुत बनिता
हितु लागो सभ फन का ॥ १ ॥

रहाउ

आगै कउ किछु तुलहा बांधहु
किआ भरवासो धन का ॥
कहा बिसासा इस भांडे का
इतनकु लागे ठनका ॥ १ ॥
सगल धरम पुंन फल पावहु ।
धूरि बांछहु सभ जनका ॥
कहै कबीरु सुनहु रे संतहु

(१३)

वैराग्य

भैरव

नांगे आवनु नांगे जाना
कोई न रहि है राजा राना ॥ १ ॥
रामु राजा नउनिधि मेरै ।
संपै हेतु कलतु धनु तेरै ॥ १ ॥
रहाउ
आवत संग न जात संगाती ।
कहा भइओ दरि बांधे हाथी ॥ २ ॥
लंका गढु सोने का भइआ ।
मूरखु रावनु किआ ले गइआ ॥ ३ ॥
कहि कबीरु किछु गुनु बीचारि ।
चले जुआरी दुइ हथ झारि ॥४॥२॥

(१४)

मन की लीला।

(बसन्त)

जोइ खसमु है जाइआ।
        पूति बापु खेलाइआ॥
        बिन स्रवणा खीरु पिलाइआ॥ १॥
देखहु लोगा कलि को भाउ।
        सुति मुकलाई अपनी माउ॥ १॥
रहाउ

पगा बिनु हुरीआ मारता।
        बदनै बिनु खिर खिर हासता॥
निद्रा बिनु नरु पै सोवै।
        बिनु बासनु खीरु बिलोवै॥ २॥
बिनु असथन गऊ लवेरी।
        पैडे बिनु बाट घनेरी॥
बिन सतिगुर बाट न पाई।
        कहु कबीर समझाई॥३॥३॥

(१५)

माया की निन्दा।

(गोंड)

खसमु मरै तउ नारि न रोवै।
        उस रखवारा अवरो होवै॥

रखवारे का होइ बिनास ।
आगे नरकु ईहा भोग बिलास ॥ १ ॥
एकु सुहागनि जगति पिआरी ।
सगले जीआ जंत की नारी ॥ १ ॥
रहाउ
सोहागनि गलि सोहै हारु ।
संत कउ बिखु बिगसै संसारु ॥
कर सीगारु बहै पखिआरी ।
संत की ठिठकी फिरै बिचारी ॥ २ ॥
संत भागि ओह पाछै परै ।
गुर परसादी मारहु डरै ॥
साकत की ओहु पिंड पराइणि ।
हम कउ द्रिशटि परै त्रखि डाइणि ॥ ३ ॥
हम तिस का बहु जानिआ भेउ ।
जब हूए क्रिपाल मिले गुरदेउ ॥
कहु कबीर अब बाहरि परी ।
संसारै कै अंचलि लरी ॥४॥४॥७॥

(१६)

माया की स्तुति

गोंड

ग्रिह शोभा जाकै रे नाहि ।
आवत पहीआ खूधे जाहि

वा कै अंतरि नहि संतोखु ।
बिनु सोहागनि लागै दोखु ॥ १ ॥
धनु सोहागनि महा पवीत ।
तपे तपीसर डोलै चीत ॥ १ ॥

रहाउ

सोहागनि किरपन की पूती ।
सेवक तजि जगत सिउ सूती ॥
साधू कै ठाढ़ी दरबारि ।
शरनि तेरी मोकउ निसतारि ॥ २ ॥
सोहागनि है अति सुंदरी ।
पग नेवर छनक छनहरी ॥
जउ लगु प्रान तऊ लगु संगे ।
नाहित चली बेगि उठ नंगे ॥ ३ ॥
सोहागनि भवन त्रै लीआ ।
दस अठ पुराण तीरथ रस कीआ ॥
ब्रहमा बिशनु महेशर बेधे ।
बड़े भूपति राजे है छेधे ॥ ४ ॥
सोहागनि उरि वारि न पारि ।
पांच नारद कै संगि विधिवारि ॥
पांच नारद के मिटवे फूटे ।
कहु कबीर गुर किरपा छूटे ॥५॥५॥८॥

(१७)

धनवान और धनहीन का भेद ।

भैरव

निरधनु आदरु कोइ न देय ।
　　लाख जतन करै ओहु चिति न धरेइ ॥ १ ॥

रहाउ

जउ निरधनु सरधन कै जाइ ।
　　आगै बैठा पीठि फिराइ ॥ १ ॥
जउ सरधनु निरधनु कै जाइ ।
　　दीआ आदरु लीआ बुलाइ ॥ २ ॥
निरधन सरधन दोनउ भाई ।
　　प्रभ की कला न मेटी जाई ॥ ३ ॥
कहि कबीर निरधन है सोई ।
　　जाके हिरदै नामु न होई ॥ ४ ॥ ८ ॥

(१८)

निन्दा और निन्दक ।

(गौड़ी)

निंदउ निंदउ मो कउ लोगु निंदउ ॥
निंदा जन कउ खरी पिआरी ।
　　निंदा बापु निंदा महतारी ॥ १ ॥

रहाउ

निंदा होइ त बैकुंठि जाईऐ ।

नाम पदारथु मनहि बसाईऐ ॥
रिदै शुध जउ निंदा होइ ।
हमरे कपरे निंदकु धोइ ॥ १ ॥
निंदा करै सु हमारा मीतु ।
निंदक मांहि हमारा चीतु ॥
निंदकु सो जो निंदा होरै ।
हमरा जीवनु निंदकु लोरै ॥ २ ॥
निंदा हमरी प्रेम पिआरु ।
निंदा हमरा करै उधारु ।
जन कबीर कउ निंदा सारु ।
निंदकु डूबा हम उतरे पारि ॥३॥२०॥७१॥

(१६)

ब्रह्म का विचार करने वाला ब्राह्मण कहा जाता है ।

(गौड़ी)

गरभ वास में कुलु नहीं जाती ।
ब्रह्म बिंद ते सभ उतपाती ॥ १ ॥
कहुरे पंडित बामन कब के होइ ।
बामन कहि कहि जनमु मत खोइ ॥ १ ॥
रहाउ
जो तूं ब्राह्मण ब्राह्मणी जाइआ ।
तउ आन बाट काहे नहीं आइआ ।

तुम कत ब्राह्मण हम कत सूद ।
हम कत लोहु तुम कत दूध ॥ ३ ॥
कहु कबीर जो ब्रह्मु बीचारै ।
सो ब्राह्मण कहीअतु है हमारै ॥४॥७॥

(२०)

वृन्दावन-वर्णन ।

(गौडी)

आस पास घन तुरसी का बिरवा ।
माझ बना रस गाऊ रे ।
ऊआ का सरूप देखि मोही गुआरनि ।
मो कउ छोडि न आउ न जाहुरे ॥ १ ॥
तोहि चरन मनु लागो सारिंगधर ।
सो मिलै जो बडभागो ॥ १ ॥
रहाउ
ब्रिंदावन मन हरन मनोहर
क्रिशन चरावत गाऊ रे ।
जा का ठाकुर तूही सारिंगधर
मोहि कबीरा नाऊरे ॥२॥१॥१५॥६६॥

(२१)

समस्त संसार मैला है केवल हरि और हरिभक्त निर्मल हैं ।

भैरव

मैला ब्रहमा मैला इंदु ।
रवि मैला मैला है चंदु ॥ १ ॥
मैला मलता इहु संसारु ।
इकु हरि निरमलु जाका अंतु न पारु ॥१॥

रहाउ

मैले ब्रहमंडाइ कै ईस ।
मैले निसि बासुर दिन तीसु ॥ २ ॥
मैला मोती मैला हीरु ।
मैला पवनु पावकु अरु नीरु ॥ ३ ॥
मैले शिवशंकर महेश ।
मैले सिद्ध साधक अरु भेष ॥ ४ ॥
मैले जोगी जंगम जटा सहेति ।
मैली काइआ हंस समेति ॥ ५ ॥
कहि कबीर ते जन परवान ।
निरमल ते जो रामहि जान ॥ ६ ॥ ३ ॥

(२२)

सारङ्गपाणि की आरती ।

प्रभाती

सुंनु संधिआ तेरी देव देवा करि
अधिपति आदि समाई ।
सिधु समाधि अंतु नहीं पाइआ

लागि रहे शरनाई ॥ १ ॥

लेहु आरती हो पुरुष निरंजन

सतिगुर पूजहु भाई ।

ठाढा ब्रहमा निगम बीचारै

अलखु न लखिआ जाई ॥ १ ॥

रहाउ

ततु तेलु नाम कीआ बाती

दीपकु देह उजारा ।

जोति लाइ जगदीश जगाइआ

बूझै बूझनहारा ॥ २ ॥

पंचे शबद अनाहद बाजे

संगे सारिंग पानी ।

कबीरदास तेरी आरती कीनी

निरंकार निरबानी ॥ ३ ॥ ५ ॥

(२३)

केवल ज्ञानी पवित्र है ।

बसन्त हिंडोल ॥घर॥२॥

माता जूठी पिता भी जूठा

जूठे ही फल लागे ।

आवहि जूठे जाहि भी जूठे

जूठे मरहि अभागे ॥ १ ॥

कहु पंडित सूचा कवनु ठाउ ।

जहा बैसि हउ भोजनु खाउ ॥ १ ॥

रहाउ

जिहबा जूठी बोलत जूठा

करन नेत्र सभि जूठे ।

इंद्री की जूठि उतरसि नाही

ब्रहम अगनि के लूठे ॥ २ ॥

अगनि भी जूठी पानी जूठा

जूठी बैसि पकाइआ ।

जूठी करछी परोसन लागा

जूठे ही बैठि खाइआ ॥ ३ ॥

गउबरु जूठा चउका जूठा

जूठी दीनी कारा ।

कह कबीर तेई नर सूचे

साची परा बिचारा ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥

(२४)

योग साधन

भैरव

शिव की पुरी बसै बुधि सारु ।

तिह तुम मिल कै करहु बिचारु ॥

ईत ऊत की सोझी परै ।

कउन करम मेरा करि करि मरै ॥

निज पद ऊपरि लागो धिआनु ।

राजाराम नामु मोरा ब्रहम गिआनु ॥ १ ॥
रहाउ

मूल दुआरै बंधिआ बंधु ।
रवि ऊपर गहि राखिआ चंदु ॥
पछम दुआरै सूरजु तपै ।
मेर डंड सिरि ऊपरि बसै ॥ २ ॥
पसचम दुआरे की सिल ओड़ ।
तिह सिल ऊपर खिड़की अउर ॥
खिड़की ऊपर दसवा दुआरु ।
कह कबीर ता का अंतु न पारु ॥३॥२॥१०॥

(२५)

षोडश तिथियां ।

(गौड़ी)

श्लोक

पंद्रह थितीं सात वार ।
कहि कबीर उरवार न पार ॥
साधिक सिध लखै जउ भेउ ।
आपे करता आपे देउ ॥ १ ॥

थितीं

अंमावस महि आस निवारउ ।
अंतरजामी रामु समारहु ॥
जीवतु पावहु मोख दुआर ।

अनभउ शबदु ततु निज सार ॥ १ ॥
चरन कमल गोबिंद रंगु लागा ।
संत प्रसादि भए मन निरमल
हरि कीरतन महि अनदिनु जागा ॥ १ ॥

रहाउ

परवा प्रीतम करहु बीचार ।
घट महि खेलै अघट अपार ॥
काल कलपना कदे न खाइ ।
आदि पुरुष महि रहै समाइ ॥ २ ॥
दुतीआ दुह करि जानै अंग ।
माइआ ब्रहम रमै सभ संग ॥
ना ओह बढ़ै न घटता जाइ ।
अकुल निरंजन एकै भाइ ॥ ३ ॥
त्रितीआ तीने सम करि लिआवै ।
आनंद मूल परम पदु पावै ॥
साध संगति उपजै बिस्वास ।
बाहरि भीतरि सदा प्रगास ॥ ४ ॥
चउथहि चंचल मन कउ गहहु ।
काम क्रोध संगि कबहु न बहहु ॥
जल थल माहे आपहि आप ।
आपै जपहु आपना जाप ॥ ५ ॥
पांचै पंचतत बिसथार ।

कानिक कामिनी जुगु बिहुआर ॥
प्रेम सुधा रसु पीवै कोइ ।
जरा मरण दुखि ढेरि न होइ ॥ ६ ॥
छठि खटु चक्र छहूं दिश धाइ ।
बिनु परचै नही थिरा रहाइ ॥
दुबिधा मेटि खिमा गहि रहहु ।
करम धरम की सूल न सहहु ॥ ७ ॥
सातैं सति करि बाचा जाणि ।
आतम रामु लेहु परवाणि ॥
छूटै संसा मिटि जाहि दुख ।
सुंन सरोवरि पावहु सुख ॥ ८ ॥
अशटमी अशट धातु की काइआ ।
तामहि अकुल महानिधि राइआ ॥
गुरगम गिआन बतावै भेद ।
उलटा रहै अभंग अछेद ॥ ९ ॥
नउमी नवै दुआर कउ साधि ।
बहती मनसा राखहु बांधि ॥
लोभ मोह सभ बीसरि जाहु ।
जुग जुग जीवहु अमर फल खाहु ॥ १० ॥
दसमी दह दिस होइ अनंद ।
छूटै भरमु मिलै गोबिंद ॥
जोति सरूप तत अनूप ।

अमल न मल न छाह नहीं धूप ॥ ११ ॥
एकादशी एक दिश धावै ।
तउ जोनी संकट बहुरि न आवै ॥
शीतल निरमल भइआ शरीरा ।
दूरि बतावत पाइआ नीरा ॥ १२ ॥
बारसि बारह उगवै सूर ।
अहि निशि बाजे अनहद तूर ॥
देखिआ तिहूं लोक का पीउ ।
अचरज भइआ जीव ते सीउ ॥ १३ ॥
तेरसि तेरह अगम बखाणि ।
अरध उरध बिचि सम पहिचाणि ॥
नीच ऊच नही मान अमान ।
बिआपिक राम सगल सामान ॥ १४ ॥
चउदसि चउदह लोक मझारि ।
रोम रोम महि बसहि मुरारि ॥
सत संतोष का धरहु धिआन ।
कथनी कथीऐ ब्रहम गिआन ॥ १५ ॥
पूनिउ पूरा चंद अकास ।
पसरहि कला सहज परगास ॥
आदि अंति मधि होइ रहिआ बीर ।
सुख सागर महि रमहि कबीर ॥ १६ ॥

(२३)

सप्त दिवस ।

(गौड़ी)

बार बार हरि के गुन गावउ ।
गुर गमि भेदु सु हरि का पावउ ॥ १ ॥
रहाउ

आदित करै भगति आरंभ ।
काइआ मंदर मनसा थंभ ॥
अहि निशि अखंड सुरही जाइ ।
तउ अनहद बेणु सहज महि बाइ ॥ १ ॥

सोम वारि शशि अंम्रितु झरै ।
चाखत बेगि सकल विष हरै ॥
बाणी रोकिआ रहै दुआर ।
तउ मनु मतवारो पीवनहार ॥ २ ॥

मंगलवार ले माहीति ।
पंच चोर की जाणै रीति ॥
घर छोडें बाहरि जिनि जाइ ।
ना तरु खरा रिसै है राइ ॥ ३ ॥

बुधवारि बुधि करै प्रगास ।
हिरदै कमल महि हरि का बास ॥
गुर मिलि दोऊ एक सम धरै ।
उरध पंक लै सीधा करै ॥ ४ ॥

ब्रिहसपति बिखिआ देइ बिहाइ ।
तीनि देव एक संगि लाइ ॥
तीनि नदी तह त्रिकुटी माहि ।
अहि निशि कसमल धोवहि नाहि ॥ ५ ॥
सुक्रितु सहारै सु इह ब्रति चड़ै ।
अनदिन आपि आप सिउ लड़ै ।
सुरखी पांचउ राखै सबै ।
तउ दूजी द्रिशटि न पैसै कबै ॥ ६ ॥
थावर थिरु करि राखै सोइ ।
जोति दीवटी घट मह जोइ ॥
बाहरि भीतरि भइआ प्रगासु ।
तब हूआ सगल करम का नासु ॥ ७ ॥
जब लगु घट महि दूजी आन ।
तउ लउ महलि न लाभै जान ॥
रमत राम सिउ लागो रंगु ।
कह कबीर तब निरमल अंग ॥ ८ ॥ १ ॥

(१८)

सन्त-महिमा ।

(गोंड)

जैसे मंदर महि बलहर ना ठहिरै ।
नाम बिना कैसे पारि उतरे ॥
कुंभ बिना जलु ना टीकावै ।

साधु बिनु जैसे अवगतु जावै ॥ १ ॥
जारउ तिसै जु रामु न चेतै ।
तन मन रमत रहै महि खेतै ॥ १ ॥
रहाउ
जैसे हलहर बिना जिमी नही बोईऐ
सूत बिना कैसे मणी परोईऐ ॥
घुंडी बिनु किआ गंठि चड़ाईऐ ।
साधु बिनु तैसे अवगतु जाईऐ ॥ २ ॥
जैसे मात पिता बिनु बालु न होई ।
बिंब बिना कैसे कपरे धोई ॥
घोर बिना कैसे असवार ।
साधु बिनु नाही दरबार ॥ ३ ॥
जैसे बाजे बिनु नही लीजै फेरि ।
खसमि दुहागनि तजि अउहेरी ॥
कहै कबीर एकै करि करना ।
गुर मुखि होइ बहुर नही मरना ॥४॥६॥६॥

(२१)

सन्त और असन्त के लक्षण ।

(गोंड)

संतु मिलै कछु सुनीऐ कहीऐ ।
मिलै असंतु मसटि करि रहीऐ ॥ १ ॥
बाबा बोलना किआ कहीऐ ।

जैसे राम नाम रवि रहीऐ ॥ १ ॥

रहाउ

संतन सिउ बोले उपकारी ।

मूरख सिउ बोल झखमारी ॥ २ ॥

बोलत बोलत बढहि बिकारा ।

बिनु बोले किआ करहि बीचारा ॥ ३ ॥

कहु कबीर छूछा घटु बोलै ।

भरिआ होइ सु कबहु न डोलै ॥४॥१॥

(१६)

नारायण के दर्शन की तीव्र उत्कण्ठा ।

(गौड़ी)

पंथु निहारै कामनी लोचन भरी ले उसासा

उर न भीजै पगु न खिसै हरि दरशन की आसा ॥१॥

उडहु न कागा कारे ।

बेगि मिलीजै अपुने राम पिआरे ।

रहाउ

कह कबीर जीवन पद कारन

हरि की भगति करीजै ।

एकु आधारु नामु नाराइणु

रसना राम रवीजै ॥२॥१॥१४॥६५॥

(२७)

श्याम सुन्दर से प्रेम ।

(गौड़ी)

एक जोति एका मिली किंबा होइ महोइ ।
जितु घटि नामु न ऊपजै फूटि मरै जन सोइ ॥१॥
सावल सुंदर रामईआ मेरा मनु लागा तोहि ॥१॥

रहाउ

साधु मिलै सिधि पाईऐ कि एहु जोगु कि भोगु ।
दुहु मिलि कारजु ऊपजै राम नाम संजोगु ॥२॥
लोग जानै इहु गीत है इहु तउ ब्रहम बीचारु ।
जिउ काशी उपदेश होइ मानस मरती बारु ॥ ३ ॥
कोई गावै को सुणै हरि नाम चितु लाइ ।
कहु कबीर संसा नहीं अंत परम गत पाइ ॥४॥१॥५५॥

(२८)

सर्वोत्तम शिक्षा ।

(गौड़ी)

कालबूत की हसतनी मन बउरारे
चलतु रचिओ जगदीस ।
काम सुआह गज बसि परे मन बउरारे
अंकुश सहिओ सीस ॥ १ ॥
बिखै बाचु हरि राचु समझ मन बउरारे
निरभउ होइ न हरि भजे मन बउरारे
गहिओ न राम जहाजु ॥ १ ॥

रहाउ

मरकट मुसटी अनाज की मन बउरारे
लीनी हाथ पसारि ।
छूटन को सहसा परिआ मन बउरारे
नाचिओ घरि घरि बारि ॥ २ ॥
जउ नलनी सूअटा गहिओ मन बउरारे
माया इहु बिउहारु ।
जैसा रंग कसुंभ का मन बउरारे
तिउ पसरिओ पासारु ॥ ३ ॥
नावन को तीरथ घने मन बउरारे
पूजन कउ बहु देव ।
कहु कबीर छूटन नही मन बउरारे
छूटन हरि की सेव ॥४॥१॥६॥५७॥

(२१)

द्दष्टिकूट ।

(क)

गौड़ी

ऐसो अचरजु देखिओ कबीर ।
दधि कै भोलै बिरोलै नीर ॥ १ ॥

रहाउ

हरि अंगूरी गदहा चरै ।
नित उठि हासै हीगै मरै ॥ १ ॥

माता भैसा अंमुहा जाइ ।
कुदि कुदि चरै रसातलि पाइ ॥ २ ॥
कहु कबीर परगट भई खेड ।
लेले कउ चूंघे नित भेड ॥ ३ ॥
राम रमत मति परगटी आई ।
कहु कबीर गुर सोझी पाइ ॥४॥१॥१४॥

(३०)

दृष्टिकूट ।

(ख)

(आसा)

फीलु रबाबी बलदु पखावज कऊआ ताल बजावै ।
पहरि चोलना गदहा नाचै भैसा भगति करावै ॥१॥
राजाराम ककरीआ बरे पकाए ।
किनै बूझन हारे खाए ॥ १ ॥

रहाउ

बैठि सिंघु घरि पान लगावै
घीस गलउरे लिआवै ।
घरि घरि मुसरी मंगलु गावहि
कछूआ शंख बजावै ॥ २ ॥
बंस को पूतु बिआहन चलिआ
सुइने मंडप छाए ।
रूप कंनिआ सुंदर बेधी

ससै सिंघ गुन गाए ॥ ३ ॥

कहत कबीर सुनहु रे संतहु

चीटी परबत खाइआ ।

कछूआ कहै अंगार भिलोरउ

लूकी शबद सुनाइआ ॥४॥६॥

३१)

दृष्टिकूट ।

(ग)

आसा

पहिला पूति पिछैरी माई ।

गुर लागो चेले की पाई ॥ १ ॥

एक अचंभउ सुनहु तुम भाई ।

देखत सिंघु चरावत गाई ॥ १ ॥

रहाउ

जल की मछुली तरवरि बिआई ।

देखत कुतरा लै गई बिलाई ॥ २ ॥

तले रे बैसा ऊपरि सूला ।

तिस के पेडि लगे फल फूला ॥ ३ ॥

घोरे चारि भैस चरावन जाई ।

बाहरि बलु गोनि घर आई ॥ ४ ॥

कहत कबीर जु इस पद बूझै ।

राम रमत तिसु सभु किछु सूझै ॥५॥६॥२२

(३२)

सत्संगति

(मारु)

रामु सिमरु पछुताहिगा मन ।
पापी जीअरा लोभु करत है
आजु कालि उठि जाहिगा ॥ १ ॥

रहाउ

लालच लागे जनमु गवाइआ
माइआ भरम भुलाहिगा ।
धन जोबन का गरबु न कीजै
कागदि जिउ गलि जाहिगा ॥ १ ॥
जउ जमु आई केश गहि पटकै
ता दिन कछु न बसाहिगा ।
सिमरन भजन दइआ नहीं कीनी
तउ मुखि चोटा खाहिगा ॥ २ ॥
धरमराइ जब लेखा मांगै
किआ मुख लै कै जाहिगा ॥
कहतु कबीर सुनहु रे संतहु
साध संगति तर जाहिगा ॥३॥१॥

(३३)

सूर्य तथा चन्द्रमा में ब्रह्म का प्रकाश है ।

(रामकली)

चंद सूरजु दुइ जोति सरूपु ।
जोति अंतरि ब्रहम अनूपु ॥ १ ॥
करु रे गिआनी ब्रहम बीचारु ।
जोती अंतरि धरिआ पसारू ॥ १ ॥
रहाउ
हीरा देखि हीरे करउ आदेसु ।
कहै कबीर निरंजन अलेखु ॥२॥२॥११॥

(३४)

जगजीवन दाता से मेल

सोरठा (घर २)

दुइ दुइ लोचन पेखा ।
हउ हरि बिनु अउरु न देखा ॥
नैन रहे रंग लाई ।
अब बेगल कहनु न जाई ॥ १ ॥
हमरा भरम गइआ भउ भागा ।
जब राम नाम चितु लागा ॥ १ ॥
रहाउ
बाजीगर डंक बजाई ।
सभ खलक तमाशे आई ।
बाजीगर स्वांगु सकेला ।
अपने रंग रवै अकेला ॥ २ ॥

कथनी कहि भरमु न जाइ ।
सभ कथि कथि रही लुकाई ॥
जाकउ गुरमुखि आप बुझाई ।
ताकै हिरदै रहिआ समाई ॥ ३ ॥
गुर किंचत किरपा कीनी ।
सभु तनु मनु देह हरि लीनी ॥
कहि कबीर रंगि राता ।
मिलिओ जगजीवन दाता ॥ ४ ॥ ४ ॥

(३५)

हरि-भक्ति का माहात्म्य ।

(रामकली)

जिह सिमरनि होइ मुकति दुआरु ।
जाहि बैकुंठि नही संसारि ॥
निरभउ कै करि बजावहि तूर ।
अनहद बजहि सदा भरपूर ॥ १ ॥
ऐसा सिमरनु करि मन माहि ।
बिनु सिमरन मुकति कत नाहि ॥ १ ॥
रहाउ
जिह सिमरन नाही ननकारु ।
मुकति करै उतरै बहु भारु ।
नमसकारु करि हिरदै माहि ।
फिरि फिरि तेरा आवनु नाहि ॥ २ ॥

जिह सिमरनि करहि तू केल ।
दीपकु बांधि धरिओ बिनु तेल ॥
सो दीपकु अमरकु संसारि ।
काम क्रोध भिखु काढी लै मारि ॥३॥
जिह सिमरनि तेरी गति होइ ।
सो सिमरनु रखि कंठ परोइ ॥
सो सिमरनु करि नही राखु उतारि ।
गुर प्रसादी उतरहि पारि ॥ ४ ॥
जिह सिमरन नाही तुहि कानि ।
मंदर सोवहि पटंबर तानि ॥
सेजसुखाली बिगसहि जीउ ।
सो सिमरन तू अन दिनु पीउ ॥ ५ ॥
जिह सिमरन तेरी जाइ बलाइ ।
जिह सिमरन तुझु पोहै न माइ ॥
सिमर सिमर हरि हरि मनि गाईऐ ।
इह सिमरन सतिगुर ते पाईऐ ॥ ६ ॥
सदा सदा सिमरि दिनु राति ।
ऊठत बैठत सासि गिरासि ॥
जागु सोइ सिमरन रस भोग ।
हरि सिमरनु पाईऐ संजोगि ॥ ७ ॥
जिह सिमरन नाहीं तुझु भार ।
सो सिमरनु राम नाम अधारु ॥

कह कबीर जा का नही अंतु ।
तिस कै आगै तंतु न मंतु ॥ ६ ॥ ६ ॥

(३६)

ईश्वर के सनात्काक होने पर मनोद्गार ।

रामकली

कवन काज सिरजे जग भीतरि
जनम कवन फलु पाइआ ।
भवनिधि तरन तारनि चिंतामनि
इक निमख न इहु मनु लाइआ ॥ १ ॥
गोबिंद हम ऐसे अपराधी ।
जिनि प्रभु जिउ पिंडु था दीआ
तिसकी भउ भगति नही साधी ॥ १ ॥

रहाउ

पर धन पर तनु पर निदा
पर अपवादु न छूटै ।
आवागवनु होतु है फुनि फुनि
इह प्रसंगु न तूटै ॥ २ ॥
जिह घर कथा होत हरि संतन
इक निमख न कीनो मै फेरा ।
लंपट चोर दूत मतवारे
तिन संग सदा बसेरा ॥ ३ ॥
काम क्रोध माइआ मद मतसरु

एऐ संपै मो माही ॥
दइआ धरमु अर गुर की सेवा
ए सुपनंतरि नाही ॥ ४ ॥
दीन दइआन क्रिपाल दमोदर
भगत बछल भैहारी ।
कहत कबीर भीर जन राखहु
हरि सेवा करउ तुमारी ॥ ५ ॥ ८ ॥

(३७)

उन्मत्त कौन है और सचेत कौन है ।

बसंत

पंडित जन माते पड़ि पुरान ।
जोगी माते जोग धिआन ॥
संनिआसी माते अहंमेव ।
तपसी माते तप के भेव ॥ १ ॥
सभ मद माते कोऊ न जाग ।
संग ही चोर घरु मुसन लाग ॥ १ ॥

रहाउ

जागै सुकदेउ अरु अकरूर ।
हणा वंतु जागै धरि लंकूरु ॥
शंकरु जागै चरन सेव ।
कलि जागे नामा जैदेव ॥ २ ॥
जागत सोवतु बहु प्रकारु ।

गुरमुखि जागै सोई सारु !!
इस देही को अधिक काम ।
कहि कबीर भजि राम नाम ॥३।२॥

(३८)

सत्संगति ही वैकुण्ठ है ।

भैरव

सभु कोई चलन कहत है ऊहां ।
न जानउ बैकुंठ है कहां ॥ १ ॥
रहाउ
आप आप मरमु न जानां ।
बातन ही बैकुंठ बखानां ॥ १ ॥
जब लगु मन बैकुंठ की आस ।
तब लगु नाही चरन निवास ॥ २ ॥
खाई कोट न परलपगारा ।
ना जानउ बैकुंठ दुआरा ॥ ३ ॥
कहि कबीर अब कहीए काहि ।
साध संगति बैकुंठै आहि ॥४॥८॥१६॥

(३६)

कुटिल पुरुषों के लक्षण ।

(गौड़ी)

हरि जसु सुनहि न हरि गुन गावहि ।
बातन ही असमानु गिरावहि ॥ १ ॥

ऐसे लोगन सिउ किआ कहीए ॥
जो प्रभू कीए भगति ते बाहजि ।
तिन ते सदा डराने रहीए ॥ १ ॥
रहाउ
आपि न देहि चुरू भर पानी ।
तिह निंदहि जिह गंगा आनी ॥ २ ॥
बैठत उठत कुटिलता चालहि ।
आपि गइ अउरनहू घालहि ॥॥३॥
छाडि कुचरचा आन न जानहि ।
ब्रहमाहू को कहिउ न मानहि ॥ ४ ॥
आपु गए अउरनहू खोवहि ।
आगि लगाइ मंदर में सोवहि ॥ ५ ॥
अवरन हसत आप हहिखाने ।
तिन कउ देखि कबीर लजाने ॥६॥१॥४४॥

(४०)

(आयु बृथा न गंवाओ किन्तु हरि नाम का स्मरण करो ।)

(आसा)

बारह बरस बालपन बीते
बीस बरसु कछु तपु न कीओ ।
तीस बरस कछु देव न पूजा
फिरि पछुताना बिरधि भइओ ॥ १ ॥

मेरी मेरी करते जनमु गइओ ।
साइरु सोखि भुजंब लिइओ ॥ १ ॥
रहाउ
सूके सरवरि पालि बंधावै
लूणै खेत हथवारि करै ।
आइओ चोर तुरंतह ले गइओ
मेरी राखत मुगध फिरै ॥ २ ॥
चरन सीसु कर कंपन लागै
नैना नीरु असार बहै ।
जिहवा बचनु सुधु नही निकसै
तब के धरम की आस करै ॥ ३ ॥
हरि जीउ क्रिपा करै लिव लावै
लाहा हरि हरि नामु लीओ ।
गुर प्रसादी हरि धनु पाइओ
अंते चलदिआ नालि चलिओ ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनहु रे संतहु
अनु धनु कछूऐ लै न गइओ ।
आई तलब गुपालराह की
माइआ मदरि छोडि चलिओ ॥५॥२॥१५॥

(४१)

केवल शुकदेव जी मन में लीन हुए थे ।

गौड़ी गुआरेरी

सुख मांगत दुखु आगै आवै ।
सो सुख हमहु न मागिआ भावै ॥ १ ॥
बिखिआ अजहु सुरति सुख आसा ।
कैसे होईहै राजा राम निवासा ॥ १ ॥

रहाउ

इस सुख ते शिव ब्रहम डराना ।
सो सुख हमहु साचु करि जाना ॥ २ ॥
सनकादिक नारद मुनि सेखा ।
तिन भी तन महि मन नही पेखा ॥ ३ ॥
इस मन कउ कोई खोजहु भाई ।
तन छूटै मन कहा समाई ॥ ४ ॥
गुर प्रसादी जैदेउ नामा ।
भगति कै प्रेमु इन ही है जाना ॥ ५ ॥
इन मन कउ नही आवन जाना ।
जिसका भरमु गइआ तिन साचु पछाना ॥६॥
इस मन कउ रूप न देखिआ काई ।
हुकमे होइ जा हुकमु बूझि समाई ॥७॥
इस मन का कोई जानै भेउ ।
इह मन लीण भए सुखदेउ ॥ ८ ॥
जीउ एक अर सगल सरीरा ।
इस मन कउ रवि रहे कबीरा ॥६॥१॥३६॥

(४२)

परमात्मा महाराजाधिराज हैं ।

(बिलावल)

कोऊ हरि समान नही राजा ।
ए भूपति सभ दिवस चारि के झूठे करत दिवाजा ॥१॥

रहाउ

तेरो जनु होइ सोइ कत डोलै
तीनि भवन पर छाजा ।
हाथु पसारि सकै को जन कउ
बोल सकै न अंदाजा ॥ १ ॥
चेति अचेत मूढ मन मेरे
बाजे अनहद बाजा ।
कहि कबीर संसा भ्रमु चूको
ध्रु प्रहिलाद निवाजा ॥ २ ॥ ५ ॥

(४३)

धन का अहङ्कार नहीं करना चाहिये ।

सारङ्ग

कहा नर गरबसि थोरी बात ।
मन दस नाजु टका चारि गांठी ऐंडौ टेढौ जात ॥१॥

रहाउ

बहुत प्रताप गाउ सउ पाए
दुइ लख टका बरात ।

दिवस चारि की करहु साहिबी
जैसे बनहर पात ॥ १ ॥
न कोउ लै आइओ इहु धनु
ना कोउ लै जातु ।
रावन हूं ते अधिक छत्रपति
खिन महि गए बिलात ॥ २ ॥
हरि के संत सदा थिरु पूजहु
जो हरि नामु जपात ।
जिन कउ क्रिया करत है गोबिन्दु
ते सतसंगि मिलात ॥ ३ ॥
मात पिता बनिता सुत संपति
अंति न चलत संगात ।
कहत कबीर राम भजु बउरे
जनमु अकारथ जात ॥४॥१॥

(४४)

ब्रह्मज्ञानी का लक्षण ।

केदारा

उसतति निंदा दोउ बिबरजित
तजहु मानु अभिमाना ।
लोहा कंचनु सम करि जानहि
ते मूरति भगवाना ॥ १ ॥
तेरा जनु एकु आधु कोई ।

काम क्रोधु लोभु मोहु बिबराजित
हरि पदु चीनै सोई ॥ १ ॥
रहाउ
रजगुण तमगुण सतगुण कहीऐ
इह तेरी सभ माइआ ।
चउथे पद कउ जो नरु चीनै
तिन ही परम पदु पाइआ ॥ २ ॥
तीरथ बरत नेम सुचि संजम
सदा रहै निहकामा ।
त्रिशना अरु माइआ भ्रमु चूका
चितवत आतम रामा ॥ ३ ॥
जिह मंदरि दीपकु परगासिआ
अंधकार तह नासा ।
निरभउ पूरि रहे भ्रमु भागा
कहि कबीर जन दासा ॥४॥१॥

(४५)

रावण के दृष्टान्त द्वारा उपदेश ।

मारू
जिन गड़ कोट कीए कंचन के
छोडि गइआ सो रावनु ॥ १ ॥
काहे कीजतु है मन भावन ।
जब जमु आइ केश ते पकरै

तह हरि को नामु छडावनु ॥ १ ॥

रहाउ

कालु अकालु खसम का कीना

इह परपंचु बुधावनु ।

कह कबीर ते अंते मुकते

जिन हिरदै राम रसाइनु ॥ २ ॥ ६ ॥

(४६)

मन की शुद्धि के बिना तीर्थस्नान तथा पवित्रता निष्फल है।

आसा

अंतरि मैल जु तीरथ नावै

तिसु बैकुंठ न जाना ।

लोक पतीणै कछू न होवै

नाही राम अयाना ॥ १ ॥

पूजहु रामु एकु ही देवा

साचा नावणु गुर की सेवा ॥ १ ॥

रहाउ

जल के मजनि जे गति होवै

नित नित मेंडुक नावहि ।

जैसे मेंडुक तैसे ओइ नर

फिरि फिरि जोनी आवहि ॥ २ ॥

मनहु कठोरु मरै बानारसि

नरकु न बांचिआ जाई

हरि का संतु मरै हाड़ंबै

त सगली सैन तराई ॥ ३ ॥

दिनसु रैनि बेदु नही शासत्र

तहा बसै निरंकारा ।

कहि कबीर नर तिसहि धिआवहु

बावरिआ संसारा ॥ ४ । ४ ॥ ३७ ॥

(४७)

हरि-भक्ति-महिमा ।

(गौड़ी)

जो जन लेहि खसम का नाउ

तिन कै सद बलिहारै जाउ ॥ १ ॥

सो निरमल निरमल हरि गुन गावै ।

सो भाई मेरै मनि भावै ॥ १ ॥

रहाउ

जिह घटि रामु रहिआ भरपूरि ।

तिन की पग पंकज हम धूरि ॥ २ ॥

जाति जुलाहा मति का धीरु ।

सहजि सहजि गुण रमै कबीरु ॥३॥३९॥

(४८)

हरिभक्ति आवागमन के चक्कर को काट डालती है ।

आसा

जोगी जती तपी संनिआसी
बहु तीरथ भ्रमना ।
लुंजित मुंजित मौनि जटाधर
अंति तऊ मरना ॥ १ ॥
ताते सेवीअले रामना ।
रसना राम नाम हितु जाकै
कहा करै जमना ॥ १ ॥

रहाउ

आगम निगम जोतिक जानहि
बहु बहु बिआकरना ।
तंत मंत्र सभ अउखद जानहि
अंति तऊ मरना ॥ २ ॥
राजभोग अरु छत्र सिंघासन
बहु सुंदरि रमना ।
पान कपूर सुबासक चंदन
अंति तऊ मरना ॥ ३ ॥
वेद पुरान संम्रिति सभ खोजे
कहू न ऊबरना ।
कहु कबीर इउ रामहि जंपहु
मेटि जनम मरना ॥ ४ ॥ ५ ॥

अवागमन से उदासीनता।

आसा

जउ मैं रूप कीए बहुतेरे
अब फुनि रूपु न होई।
तागा तंतु साजु सभु थाका
राम नाम बसि होई ॥ १ ॥
अब मोहि नाचनो न आवै।
मेरा मनु मंदरीआ न बजावै ॥ १ ॥

रहाउ

कामु क्रोधु माइआ लै जारी
त्रिशना गागरि फूटी।
काम चोलना भइआ है पुराना
गइआ भरमु सभु छूटी ॥ २ ॥
सरब भूत ऐकै करि जानिआ
चूके बाद बिबाद।
कहि कबीर मैं पूरा पाइआ
भए राम परसादा ॥ ३ ॥ ६ ॥ २८ ॥

(५०)

रामभक्ति के बिना समस्त संसार अंधा है।

(गौड़ी)

बिपल बसत्र केते है पहिरे
किआ बन मधे बासा।

कहा भइओ नर देवा धोखे
किआ जल बोरिओ गिआता ।। १ ।।
जीअरे जाहिगा मैं जाना ।
अबिगतु समझु इआना ।।
जत जत देखउ बहुरि न पेखउ
संगि माइआ लपटाना ।। १ ।
रहाउ
गिआनी धिआनी बहु उपदेसी
इह जगु सगलो धंधा ।
कहि कबीर इक राम नाम बिनु ।
इआ जगु माइआ अंधा ।।२।।१।।१६।।६७।।

(५१)

माता के गर्भ में जीव की दशा ।

(गौड़ी)

जोनि छाडि जउ जंग महि आइओ ।
लागत पवन खसमु बिसराइओ ।। १ ।।
जीअरा हरि के गुन गाउ ।। १ ।।
रहाउ
गरभ जोनि महि उरध तपु करता ।
तउ जठर अगनि महि रहता ।। २ ।।
लख चउरासीह जोनि भ्रमि आइओ ।
अबके छुटके ठउर न ठाइओ ।। ३ ।।

कहु कबीर भज सारिंग पानी ।
आवत दीसै जाति न जानी ॥४॥१॥११॥६२॥

(५२)

राम अद्वितीय हैं ।

(गौड़ी)

दुपदे

ना मै जोग धिआन चितु लाइआ ।
बिनु बैराग न छूटसि माइआ ॥
कैसे जीवन होइ हमारा ।
जब न होइ राम नाम अधारा ॥ १ ॥
रहाउ

कहु कबीर खोजउ असमान ।
राम समान न देखउ आन ॥ २ ॥ ३४ ॥

(५३)

राम भक्ति के बिना सुन्दर पुरुष भी कुरूप है ।

गौड़ी

जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी ।
बिधवा कस न भई महतारी ॥ १ ॥
जिह नर राम भगति नहि साधी ।
जनमत कस न मुओ अपराधी ॥ १ ॥

रहाउ

मुचु मुचु गरभ गए की न बचिआ ।

बुडभुज रूप जीवै जग मझिआ ॥ २ ॥

कहु कबीर जैसे सुंदर सरूप ।

नाम बिना जैसे कुबज कुरूप ॥३॥२५॥

(५४)

आवागमन ।

(गौडी)

असथावर जंगम कीट पतंगा ।

अनिक जनम कीए बहु रंगा ॥ १ ॥

ऐसे घर हम बहुत बसाए ।

जब हम राम गरभ होइ आए ॥ १ ॥

रहाउ

जोगी जती तपी ब्रहमचारी ।

कबहू राजा छत्रपति कबहू भेखारी ॥२॥

साकत मरहि संत सभि जीवहि ।

राम रसाइनु रसना पीवहि ॥ ३ ॥

कहु कबीर प्रभु किरपा कीजै ।

हारि परा अब पूरा दीजै ॥ ४ ॥ १३ ॥

(५५)

भगवान् और भक्त का घनिष्ठ सम्बन्ध ।

गौड़ी

माधउ जल की पिआस न जाइ

जल महि अगनि उठी अधिकाइ ॥ १ ॥

रहाउ

तूं जलनिधि हउ जल का मीनु ।

जल महि रहउ जलहि बिन खीनु ॥ १ ॥

तूं पिंजरु हउ सूआटा तोर ।

जमु मंजारु कहा करै मोर ॥ २ ॥

तूं तरवरु हउ पंखी आहि ।

मंद भागी तेरो दरशनु नाहि ॥ ३ ॥

तूं सतिगुरु हउ नउतनु चेला

कहि कबीर मिलु अंत की बेला ॥४॥२॥

(५६)

दम्भ खण्डन ।

गौड़ी

नगन फिरत जो पाईऐ जोगु ।

बनका मिरगु मुकति सम होगु ॥ १ ॥

किआ नागे किआ बाधे चाम ।

जब नही चीनसि आतम राम ॥ १ ॥

रहाउ

मूंड मुंडाए जो सिधि पाई ।

मुकती भेड न गईआ काई ॥ २ ॥

बिंदु राखि जो तरीऐ भाई ।
खुसरै किउ न परम गति पाई ॥ ३ ॥
कहु कबीर सुनहु नर भाई ।
राम नाम बिनु किनि गति पाई ॥ ४ ॥

(५७)

कमलापति की पूर्णता ।

गौड़ी तथा सोरठ

रे जिअ निलज लाजु तोहि नाही
हरि तजि कत काहू के जाही ॥ १ ॥
रहाउ
जा को ठाकुरु ऊचा होई ।
सो जनु पर घर जात न सोही ॥ १ ॥
सो साहिबु रहिआ भरपूरि ।
सदा संगि नाही हरि दूर ॥ २ ॥
कवला चरन शरन है जाके ।
कहु जनका नाही घरि ताके ॥ ३ ॥
सभ कोऊ कहै जासु की बाता ।
सो समरथु निज पति है दाता ॥ ४ ॥
कह कबीर पूरन जग सोई ।
जा के हिरदै अवरु न होई ॥ ५ ॥ ३८ ॥

(न० ५८)

हरि रूपी हीरा ।

(आसा)

हीरै हीरा बेध पवन मनु,
सहजे रहिआ समाई ।
सगल जोति इन हीरै बेधी,
सतिगुर बचनी मै पाई ॥ १ ॥
हरि की कथा अनाहद बानी ।
हंसु हुइ हीरा लेइ पछानी ॥ १ ॥
रहाउ
कहि कबीर हीरा अस देखिओ
जग महि रिहा समाई ।
गुपत हीरा प्रगट भइओ
जब गुर गम दीआ दिखाई ॥२॥१॥३१॥

(५६)

सखी भाव ।

सूही

थरहर कंपै बाला जीउ ।
ना जानउ किआ करसी पीउ ॥ १ ।
रैन गई मत दिनु भी जाइ ।
भवर गए बग बैठे आइ ॥ १ ॥
रहाउ
काचै करवै रहै न पानी ।
हंसु चलिआ काइआ कुमलानी ॥ २ ॥

कुआर कंनिआ जैसे करत सीगारा ।
किउ रलीआ मानै बाझु भतारा ॥ ३ ॥
काग उडावत भुजा पिरानी ।
कहु कबीर इह कथा सिरानी ॥४॥२॥

(६०)

सखी भाव ।

(गौड़ी)

राजा राम तूं ऐसा निरभउ
तरन तारन राम राइआ ॥ १ ॥
रहाउ
जब हम होते तब तुम नाही ।
अब तुम हहु हम नाही ।
अब हम तुम एक भए हहि
एकै देखत मन पती आही ॥ १ ॥
जब बुधि होती तब बलु कैसा
अब बुधि बलु न खटाई ॥
कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी
बुधि बदली सिधि पाई ॥२॥२१॥७२॥

(६१)

सखी भाव ।

आसा

तनु रैनी मनु पुनरपि करि हउ

पाचउ ततु बराती ।
रामराइ सिउ भावरि लेहउ
आतम तिह रंगराती ॥ १ ॥
गाउ गाउ री दुलहिनी मंगल चारा ।
मेरे ग्रिह आए राजा राम भतारा ॥ १ ॥
रहाउ
नाभि कमल महि बेदी रचिले
ब्रहमगिआन उचारा ।
रामराइ सो दूलहु पाइओ
अस बड भाग हमारा ॥ २ ॥
सुर नर मुनि जन कउतक आई
कोटि तेतीसउ जाना ।
कहि कबीर मोहि बिआहि चले है
पुरख एक भगवाना ॥३॥२॥२४॥

(६२)

अनधिकारी और कुपात्र को हरिकीर्तन नहीं सुनाना चाहिए।

आसा

कहा सुआन कउ सिम्रिति सुनाए ।
कहा साकत पै हरि गुन गाए ॥ १ ॥
राम राम राम रमे रमि रहीऐ ।
साकत सिउ भूलि नही कहीऐ ॥ १ ॥

रहाउ

कऊआ कहा कपूर चराए ।
कह बिसीअर कउ दूध पीआए ॥ २ ॥
सति संगति मिलि बिबेक बुधि होई ।
पारस परसि लोहा कंचन सोई ॥ ३ ॥
साकत सुआन सभु करे कराइआ ।
जो धुरि लिखिआ सु कमाइआ ॥ ४ ॥
अंम्रितु लै लै नीमु सिंचाई ।
कहत कबीर उआ को सहजु न जाई ॥५॥७॥२०

(६३)

दम्भ खंडन ।

सोरठा

हिरदै कपटु मुख गिआनी ।
झूठे कहा बिलोवसि पानी ॥ १ ॥
काइआ मांजसि कउन गुना ।
जउ घट भीतरि है मलना ॥ १ ॥

रहाउ

लउकी अठसठि तीरथ नाई ।
कउरापन तऊ न जाई ॥ २ ॥
कह कबीर बीचार बीचारी ।
भवसागर तारि मुरारी ॥

(६४)

चेतावनी ।

(मारू)

रामु सिमरु पछुताहिगा मन ।
पापी जिअरा लोभु करतु है ।
आजु कालि उठि जाहिगा ॥ १ ॥

रहाउ

लालच लागे जनमु गवाइआ
माइआ भरम भुलाहिगा ।
धन जोबन का गरबु न कीजै
कागद जिउ गलि जाहिगा ॥ १ ॥
जउ जमु आइ केश गहि पटकै
ता दिन कछू न बसाहिगा ।
सिमरनु भजनु दइआ नहीं कीनी
तउ मुखि चोटां खाहिगा ॥ २ ॥
धरमराइन जब लेखा मांगै
किया मुखु लै कै जाहिगा ।
कहतु कबीर सुनहु रे संतहु
साध संगति तरि जाहिगा ॥ ३ ॥ १ ॥

(६५)

ब्रह्म का निवास-स्थान ।

भैरव

अगमु दुरगम गड़ि रचिओ बास ।
　　जा महि जोति करे परगास ॥
बिजुली चमकै होइ अनंदु ।
　　जिह पउड़े प्रभु बालगोबिंद ॥ १ ॥
इहु जिउ राम नाम लिवलागै ।
　　जरा मरनु छूटै भ्रमु भागै ॥ १ ॥

रहाउ

अबरन बरन सिउ मन ही प्रीति ।
　　हउमै गावनि गावहि गीति ॥
अनहद शबद होत झुनकार
　　जिह पउड़े प्रभु श्री गोपाल ॥ २ ॥
खंडल मंडल मंडल मंडा
　　त्रिअसथान तीन त्रिअ खंडा ।
अगम अगोचरु रहिआ अभअंत
　　पार न पावै को धरनीधर मंत ॥ ३ ॥
कदली पुहप धूप परगास ।
　　रज पंकज महि लीओ निवास ॥
दुआदस दल अभअंतरि मंत ।
　　जह पउड़े श्री कमलाकंत ॥ ४ ॥
अरध उरध मुख लागो कासु ।
　　सुन मंडल महि करि परगासु ॥
ऊहां सूरज नाही चंद

आदि निरंजनु करै अनंद ॥ ५ ॥
सो ब्रहमंडि पिंडि सो जानु ।
मान सरोवरि करि इसनानु ॥
सोहं सो जा कउ है जाप ।
जा कउ लिपत न होइ पुन अरु पाप ॥६॥
अबरन बरन घाम नहीं छाम ।
अवर न पाईऐ गुर की साम ॥
टारी न टरै आवै न जाइ ।
सुंन सहजि महि रहिओ समाइ ॥ ७ ॥
मन मधे जानै जो कोई । जो बोलै सो आपे होई ।
जोति मंत्रि मनि असथिरु करै ।
कहि कबीर सो प्रानी तरै ॥ २ ॥ १ ॥

(६६)

मृत्यु के पश्चात् मनुष्य की अपेक्षा पशु अधिक लाभदायक है ।

(गोंड)

नरू मरै नरु कामि न आवै
पशु मरै दस काजि सवारै ॥ १ ॥
अपने करम की गति मै किआ जानउ
मै किआ जानउ बाबा रे ।
रहाउ
हाड जले जैसे लाकरी का तूल ।

केश जले जैसे घास का पूला ॥ २ ॥
कहु कबीर तब ही नरु जागै ।
जम का डंडु मूंड महि लागै ॥३ ॥ २ ॥

(६७)

मनुष्य की परिस्थिति ।

सोरठि

जब जरीऐ तब होइ भसम
तनु रहै किरम दल खाई ॥
काची गागर नीरु परतु है
इहा तन की इहै बड़ाई ॥ १ ॥
काहे भइआ फिरतौ फूलिआ ।
जब दस मास उरध मुख रहता
सो दिन कैसे भूलिआ ॥ १ ॥

रहाउ

जिउ मधुमाखी तिउ स ठोरि
रसि जोरि जोरि धनु कीआ ।
मरती बार लेहु लेहु करीऐ
भूतु रहन किउ दीआ ॥ २ ॥
देहुरी लउ बरी नारि संगि भई
आगै सजन सुहेला ।
मरघट लउ सब लोग कुटुंबु भइओ
आगे हंसु अकेला ॥ ३ ॥

कहतु कबीर सुनहु रे प्रानी

परे कालग्रस कूआ ।

झूठी माइआ आपु बंधाइआ

जिउ नलनी भ्रमि सूआ ॥ ४ ॥ ५ ॥

(६८)

परिपूर्ण तथा प्रफुल्लित ब्रह्म ।

बसंत घरु १

मउली धरती मउलिआ आकाशु ।

घटि घटि मउलिआ आतम प्रगाशु ॥

राजा राम मउलिआ अनत भाइ ।

जह देखउ तह रहिआ समाइ ॥ १ ॥

रहाउ

दुतीआ मउले चारि वेद ।

सिंम्रिति मउली सिउ कतेब ॥ २ ॥

शंकर मउलिओ जोग धिआन ।

कबीर को सुआमी सभ समान ॥३॥१॥

(नं० ६९)

मन वनजारा ।

बसंत

नाइकु एकु बनजारे पांच ।

बरध पचीसकु संगु कांचि ॥

नउ बहीआ दस गोनि आहि ।

कसनि बहतरि लागि ताहि ॥ १ ॥
मोहि ऐसे बनज सिउ नहीं न काजु ।
जिह घटै मूल नित बढ़ै बिआजु ॥ १ ॥

रहाउ

सात सूति मिल बनजु कीन ।
करम भावनी संग लीन ॥
तीन जगाती करत रारि ।
चलो बनजारा हाथि झारि ॥
पूंजी हिरानी बनजु टूटि ।
दह दिश टांडो गइओ फूटि ॥
कह कबीर मन सरसी काज ।
सहज समानो त भरम भाज ॥ २ ॥ ६ ॥

(नं० ७०)

काम ।

बसंत

इसु तन मन मधे मदन चोर ।
जिनि गिआन रतनु हरि लीन मोर ॥
मै अनाथु प्रभु कहउ काहि ।
को को न बिगूतो मै को आहि ॥ १ ॥
माधउ दारुन दुखु सहिओ न जाइ ।
मेरो चपल बुधि सिउ कहा बसाइ ॥ १ ॥

रहाउ

सनक सनंदन शिव शुकादि ।
नाभि कमल जाने ब्रह्मादि ॥
कवि जन जोगी जटा धारि ।
सभ आपन अउसर चले सारि ॥ २ ॥
तू अथाहु मोहि थाह नाहि ।
प्रभ दीनानाथ दुखु कहउ काहि ॥
मेरो जनम मरण दुख आथि धीर ।
सुख सागर गुन रउ कबीर ॥ ३ ॥ ५ ॥

(७१)

मोह-निवृति ।

भैरव

जब लगु मेरी मेरी करै ।
तब लगु काजु एकु नही सरै ॥
जब मेरी मेरी मिट जाइ
तब प्रभ काजु सवारहि आई ॥ १ ॥
ऐसा गिआन विचार मना ।
हरि की न सिमरहु दुख भंजना ॥ १ ॥

रहाउ

जब लग सिंघ रहै बन माहि ।
तब लग बन फूलै ही नाहि ।
जब ही सिआरु सिंघ कउ खाइ ।

फूलि रही सगली वनराइ ॥ २ ॥
जीतो बूडै हारौ तिरै ।
गुर प्रसादी पारि उतरै ॥
दास कबीरु कहै समझाइ ।
केवल राम रहहु लिव लाइ ॥३॥६॥१४॥

(७२)

मोह-निवृति ।

श्रीराग

जननी जानत सुत बड़ा होत है
इनाकु न जानै जि दिन दिन अवध घटत है ॥
मोर मोर करि अधिक लाडु धरि
पेखत ही जमराउ हसै ॥ १ ॥
ऐसा तैं जगु भरम लाइआ
कैसे बुझै जब मोहिआ है माइआ ॥ १ ॥
(रहाउ)
कहत कबीर छाडि बिखिआ रस
इत संगति निहचल मरणा ॥
रमईआ जपहु प्राणी अनत जीवण बाणी
इन विधि भवसागर तारणा ॥ २ ॥
जां तिस भावै ता लागै भाउ ।
भरम भुलावा विचहु जाइ ॥
उपजै सहजु गिआन मति जागै ।

गुर प्रसादि अंतर लिव लागै ॥ ३ ॥
इत संगति नाही मरणा ।
हुकम पछाणि ता खसमै मिलणा ॥ १ ॥

(नं० ७३)

शरीर अनित्य है।

(गौड़ी)

चोआ चंदन मरदन अंगा ।
सो तनु जलै काठ कै संगा ॥ १ ॥
इसु तन धन की कवन बड़ाई ।
धरनि परै उरवारि न जाई ॥ १ ॥
रहाउ
राति जि सोवहि दिन करहि काम ।
इक खिनु लेहि न हरि को नाम ॥ २ ॥
हाथित डोर मुखि खाइओ तंबोर ।
मरती बार कसि बांधिओ चोर ॥ ३ ॥
गुर मति रसि रसि हरि गुन गावै ।
रामै राम रमत सुख पावै ॥ ४ ॥
किरपा करि कै नामु द्रिड़ाई ।
हरि हरि बासु सुगंध बसाई ॥ ५ ॥
कहत कबीर चेति रे अंधा ।
सति रामु झूठा सभु धंधा ॥ ६ ॥ १६ ॥

(७४)

क्षण-भंगुर-शरीर ।

(गौड़ी)

पानी मैला माटी गोरी ।
इस माटी की पुतरी जोरी ॥ १ ॥
मै नाही कछु आहि न मोरा ।
तनु धनु सब रस गोबिंद तोरा ॥ १ ॥
रहाउ
इस माटी महि पवन समाइआ ।
झूठा परपंच जोरु चलाइआ ॥ २ ॥
किनहू लाख पांच की जोरी ।
अंत की बार गगरीआ फोरी ॥ ३ ॥
कहि कबीर इक नीव उसारी ।
खिन महि बिनसि जाइ अहंकारी ।४॥१। ९॥६०

(७५)

शरीर-दुर्ग ।

विजय
भैरव

किउ लीजै गढ़ बंका भाई ।
दोवर कोट अरु तेवर खाई ॥ १ ॥
रहाउ
पांच पचीस महि मद मतसर
आडी परबल माइआ ।

जन गरीब को जोरु न पहुंचै
        कहा करउ रघुराइआ ॥ १ ॥
कामु किवारी दुख सुख दरवानी
        पाप पुंनु दरवाजा ॥
क्रोध प्रधान महा बड दुंदर
        तह मनु मावासी राजा ॥ २ ॥
स्वाद सनाह टोपु ममता को
        कुबुधि कमान चढ़ाई ।
तिशना तीर रहै घट भीतरि
        इउ गढ़ लीओ न जाई ॥ ३ ॥
प्रेम पलीता सुरति हवाई
        गोला गिआन चलाइआ ।
ब्रहम-अगनि सहजे परजाली
        एकहि चोट सिझाइआ ॥ ४ ॥
सतु संतोष लै लरने लागा
        तोरे दुइ दरवाजा ।
साध संगति अरु गुर की क्रिपा ते
        पकरिओ गढ को राजा ॥ ५ ॥
भगवत भीरि सकति सिमरन की ।
        कटी काल भै फासी ॥
दास कमीर चड़िओ गड़ ऊपरि
        राजु लीओ अबिनासी ॥६॥६॥१७॥

(७६)

माया-जाल ।

भैरव

जल महि मीन माइआ के बेधे ।
दीपक पतंग माइआ के छेदे ॥
काम माइआ कुंचर कउ बिआपै ।
भुइअंगम भ्रिंग माइआ महि खापै ॥ १ ॥
माइआ ऐसी मोहनी भाइ ।
जेते जीअ तेते डहकाई ॥ १ ॥

रहाउ

पंखी म्रिग माइआ महि राते ।
शाकर माखी अधिक संतापे ॥
तुरे उषट माइआ महि भेला ।
सिध चउरासीह माइआ महि खेला ॥ २ ॥
छिअ जती माइआ के बंदा ।
नवै नाथ सूरज अरु चंदा ॥
तपे रिखीसुर माइआ महि सूता ।
माइआ महि कालु अरु पंच दूता ॥ ३ ॥
सुआन सिआल माइआ मह राता ।
बंतर चीते अरु सिंघाता ॥
मंजार गाडर अरु लूबरा ।
बिरख मूल माइआ महि परा ॥ ४ ॥

माइआ अंतरि भीने देव ।

सागर इंद्रा अरु धरतेव ।

कह कबीर जिसु उदर तिस माइआ

तब छूटै जब साधू पाइआ ॥५॥५॥१३॥

(७७)

पुत्र-भाव ।

आसा

बापि दिलासा मेरो कीना ।

सेज सुखाली मुख अंम्रितु दीना ॥

तिसु बाप कउ किऔं मनहु विसारी

आगै गइआ न बाजी हारी ॥ १ ॥

मुई मेरी माई हउ खरा सुखाला ।

पहिरउ नही दगली लगै न पाला ॥ १ ॥

रहाउ

बालि तिसु बापै जिनि हउ जाइआ ।

पंचा ते मेरा संगु चुकाइआ ॥

पंच मारि पावा तलि दीने ।

हरि सिमरनि मेरा मनु तनु भीने ॥ २ ॥

पिता हमारो वड गोसाई ।

तिसु पिता पहि हउ किउ करि जाई ॥

सतिगुर मिल तां मारगु दिखाइआ ।

जगत पिता मेरै मनि भाइआ ॥ ३ ॥

हउ पूतु तेरा तूं बापु मेरा ।
एकै ठाहर दुहा बसेरा ।
कह कबीर जिन एको बूझिआ ।
गुर प्रसादि मैं सभु कछु सूझिआ ॥४॥२॥

(७८)

विनती ।

(बिलावनु)

राखि लेहु हम ते बिगरी ।
शीलु धरमु जपु भगति न कीनी
हउ अभिमान टेढ पगरी ॥ १ ॥
रहाउ
अमर जानि संची इह काइआ ।
इहि मिथिआ काची गगरी ॥
जिनहि निवाजि साजि हम कीए ।
तिसहि विसारि अवरि लगरी ॥ १ ॥
संधिक तोहि साध नही कहीअउ
सरनि परे तुमरी पगरी ॥
कहि कबीर इह बिनती सुनीअहु ।
मत घालहु जम की खबरी ॥२॥६॥

(७९)

वैरागी प्रति उपदेश ।

(मारू)

अनभउ किनै न देखिआ बैरागी अड़े ।
विनु भै अनभउ होइ वणाहंबै ॥ १ ॥
शहु हदूरि देखै ता भउ पवै बैरागीअड़े ।
हुकमै बूझै त निरभउ होइ वणाहंबै । २॥
हरि पाखंड न कीजई बैरागीअड़े ।
पाखंडि रता सभु लोक वणाहंबै ॥ ३ ॥
त्रिशना पासु न छोड़ई बैरागीअड़े ।
ममता जालिआ पिंडु वणाहंबै ॥ ४ ॥
चिंता जालि तनु जालिआ बैरागीअड़े ।
जे मनु मिरतकु होइ वणाहंबै ॥ ५ ॥
सति गुर बिनु बैरागु न होवई बैरागीअड़े ।
जे लोचै लभु कोइ वणाहंबै ॥ ६ ॥
करम होवै त सतिगुर मिलै बैरागीअड़े ।
सहजे पावै सोइ वणाहंबै ॥ ७ ॥
कहु कबीर इक बैनती बैरागीअड़े ।
मो कउ भउजल पारि उतारि वणाहंबै ॥८॥१॥

(८०)

अनन्य-भक्ति ।

भैरव

माथै तिलकु हथि माला बाना ।
लोगन राम खिलउना जाना ॥ १ ॥
जउ हउ बउरा तउ राम तोरा ।

लोगु मरमु कह जाने मोरा ॥ १ ॥

रहाउ

तोरउ न पाती पूजउ न देवा ।

राम भगति बिनु निहफल सेवा ॥ २ ॥

सतुगुरु पूजउ सदा सदा मनावउ ।

ऐसी सेव दरगह सुखु पावउ ॥ ३ ॥

लोगु कहै कबीर बउराना ।

कबीर का मरमु राम पहिचाना ॥४॥६॥

(नं० ८१)

इन्द्रिय-निग्रह ।

गोंड

कूटनु सोइ जु मन कउ कूटै ।

मन कूटै तउ जमते छूटै ॥

कुटि कुटि मन कसवटी लावै ।

सो कूटनु मुकति बहु पावै ॥ १ ॥

कूटनु किसै कहहु संसार ।

सगल बोलन के माहि बीचार ॥ १ ॥

(रहाउ)

नाचन सोई जु मन सिउ नाचे ।

झूठि न पतीऐ परचै साचै ।

इस मनु आगे पूरे ताल ।

इस नाचन के मुख रखवाल ॥ २ ॥

बजारी सो जु बजारहि सोधै ।
पांच पलीतह कउ परबोधै ॥
नउ नाइक की भगति पछानै ।
सो बाजारी हम गुर मानै ॥ ३ ॥
तसकरु सोइ जि तात न करै ।
इन्द्री कै जतनि नामु उचरै ॥
कहु कबीर हम ऐसे लछन ।
धनु गुरदेव अति रूप बिचछन ॥४॥७॥१०॥

(नं० ८२)

दुष्कर्म-निवृत्ति ।

सोरठ

बहु परपंच करि परधनु लिआवै ।
सुति दारा पहि आनि लुटावै ॥ १ ॥
मन मेरे भूले कपट न कीजै ।
अति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै ॥ १ ॥

रहाउ

छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै ।
तब तेरी ओक कोई पानीओ न पावै ॥ २ ॥
कहत कबीर कोइ नहीं तेरा ।
हिरदै राम की न जपहि सवेरा ॥ ३ ॥

(नं० ८३)

(काल भगवान् अत्यन्त बलशाली है)

(बिलावल)

ऐसो इहु संसारु पेखना
रहन न कोऊ पईहै रे ।
सूधे सूधे रेगि चलहु तुम
न तर कुधका दिवईहै रे ॥ १ ॥
रहाउ

बारे बूढे तरुने भइआ
सभहू जमु लै जईहै रे ।
मानसु बपुरा मूसा कीनो
मीचु बिलईआ खईहै रे ॥ १ ॥
धनवंता अरु निर्धन मनई
ता की कछू न कानी रे ।
राजा परजा सम करि मारै
ऐसो कालु बडानी रे ॥ २ ॥
हरि के सेवक जो हरि भाए
तिनकी कथा निरारी रे ।
आवहि न जाहि न कबहू मरते
पारब्रहम् संगारी रे ॥ ३ ॥
पुत्र कलत्र लछमी माइआ
इहै तजहु जीअ जानी रे ।
कहत कबीर सुनहु रे संतहु
मिलि हैं सारिंग पानी रे ॥ ४ ॥ १ ॥

(८४)

[काल भगवान् अत्यन्त बलशाली है]

सोरठ

बेद पुरान सभै मत सुनिकै
करी करम की आसा ।
काल ग्रसत सब लोक सिआने
उठ पंडित पै चले निरासा ॥ १ ॥
मन रे सरिओ न एकै काजा ।
भजिओ न रघुपति राजा ॥ १ ॥
(रहाउ)
बन खंड जाइ जोगु तप कीनो
कंदु मूलु चुनि खाइआ ।
नादी बेदी सबदी मोनी
जम के पटे लिखाइआ ॥ २ ॥
भगति नारदी रिदै न आई
काछि कूछि तनु दीना ।
राग रागनी डिंभ होई बैठा
उन हरि पहि किआ लीना ॥ २ ॥
परिऔ कालु सभै जग ऊपरि
माहि लिखे भ्रम गिआनी ।
कहु कबीर सब भए खालसे
प्रेम भगति जिह जानी ॥ ४ ॥ ३ ॥

(८५)

परमेश्वर से पराङ्गमुख पुरुष की दशा।

मारू

दीन बिसारिओ रे दीवाने
दीन बिसारिओ रे
पेट भरिओ पसूआ जिउ सोइओ
मनुख जनमु है हारिओ ॥ १ ॥

रहाउ

साध संगति कबहूं नहीं कीनी
रचिओ धंधै झूठ।
सुआन शूकर बाइस जिवै
भटकतु चालिओ ऊठ ॥ १ ॥
आपस कउ दीरघ करि जानै
अउरन कउ लग मात।
मनसा वाचा करमना मै
देखो दोजक जात ॥ २ ॥
कामी क्रोधी चातुरी बाजीगर बेकाम
निंदा करते जनमु सिरानो
कबहु न सिमरिओ रामु ॥ ३ ॥
कहि कबीर चेतै नही मूरखु
मुगध गवारु।
राम नामु जानिओ नहीं

कैसे उतरसि पारि ॥४॥१॥

(८६)

इन्द्रजाल-संसार ।

(आसा)

बिंदु ते जिनि पिंड कीआ
अगनि कुंड रहाइआ ॥
दस मास माता उदरि राखिआ
बहुरि लागि माइआ ॥ १ ॥
प्रानी कहे कउ लोभ लागे
रतन जनमु खोइआ ।
पूरब जनमि करम भूमि
बीजु नाही बोइआ ॥ १ ॥

रहाउ

बारिक ते बिरधि भइआ
होना सो होइआ ।
जा जम आए झोट पकरै
तबहि काहे रोइआ ॥ २ ॥
जीवनै की आस करहि
जमु निहारै सासा ।
बाजीगरी संसार कबीरा
चेति ढालि पासा ॥३॥१॥२३॥

(८७)

संसार-वृक्ष ।

रामकली

तरवरु एकु अनंत डार शाखा
पुहप पत्र रस भरीआ ।
इह अंम्रित की बाड़ी है रे
तिनि हरि पूरै करीआ ॥ १ ॥
जानी जानी रे राजाराम की कहानी ।
अंतरि जोति राम परगासी
गुरमुखि विरलै जानी ॥ १ ॥
रहाउ
भवरु एक पुहप रस बीधा
बारह ले उर धरिआ ।
सोरह मधे पवनु झकोरिआ
आकासे फरफरिआ ॥ २ ॥
सहज सुनि इक बिरवा उपजिआ
धरती जल हर सोखिआ
कहि कबीर हउ ताका सेवकु
जिनि इहु बिरवा देखिआ ॥ ३ ॥ ६ ॥

(८८)

श्री राम जी की भक्ति के बिना संसार के समस्त कर्म निष्फल हैं ।

सोरठ

बुत पूजि पूजि हिंदू मूए
तुरक मूए सिर नाई ।
ओइ ले जारे ओइ ले गाडे
तेरी गति दुहू न पाई ॥ १ ॥
मन रे संसारु अंध गहेरा ।
चहु दिस पसरिओ है जम जेवरा ॥ १ ॥

रहाउ

कबित पड़े पढ़ि कबिता मूए
कपड़ केदारै जाई ॥
जटा धारि जोगी मूए
तेरी गति इन हि न पाई ॥ २ ॥
दरबु संचि संचि राजे मूए
गडिले कंचन भारी ।
बेद पड़े पड़ि पंडित मूए
रूप देख देख नारी ॥ २ ॥
राम नाम बिनु सभै बिगूते
देखहु निरखि सरीरा ।
हरि के नाम बिनु किन गति पाई
कहि उपदेश कबीरा ॥ ४ ॥ १ ॥

(८६)

ईश्वर-भावना-विहीन

पाषाण-पूजन ।

भैरव

महला ५

जो पाथर कउ कहिते देव ।
ता की बिरथा होवे सेव ॥
जो पाथर की पाईं पाइ ।
तिस की घाल अजांई जाइ ॥ १ ॥
ठाकुर हमरा सदा बोलंता ।
सरब जीआ कउ प्रभु दान देता ॥ १ ॥

रहाउ

अंतरि देउ न जाने अंधु ।
भ्रम का मोहिआ पावै फंधु ॥
न पाथरु बोलै न किछु देइ ।
फोकट करम निहफल है सेव ॥ २ ॥
जे मिरतक कउ चंदन चड़ावै ।
उस ते कहहु कवन फल पावै ॥
जे मिरतक कउ बिसटा माहि रुलाई ।
तां मिरतक का किआ घटि जाई ॥ ३ ॥
कहत कबीर हउ कहउ पुकारि ।
समझ देख साकत गावारि ॥
दूजै भाइ बहुतु घर गाले ।
राम भगत है सदा सुखाले ॥ ४ ॥ ४ ॥

(६०)

राम-रस ।

गौड़ी

रे मन तेरो कोइ नहीं
खिंच लए जिनि भारु ।
बिरख बसेरो पंखि को
तैसो इहु संसारु ॥ १ ॥
राम रस पिआरे ।
जिह रस बिसर गए रस अउर ॥ १ ॥

रहाउ

अउर मूए किआ रोईऐ
जउ आपा थिरु न रहाइ ।
जो उपजै सो बिनसि है
दुखु करि रोवै बलाइ ॥२॥
जह की उपजी तह रची
पीवत मरदन लाग ।
कहि कबीर चिति चेतिआ
राम सिमरि बैराग ॥३॥२॥१३॥६४॥

(६१)

दास-भाव ।

सोरठ

जा के निगम दूध के थाटा

समुंदु बिलोवन कउ माटा ।
ताकी हउ बिलोवन हारी ।
किउ मेटेगो छाछि तुहारी ॥ १ ॥
चेरी तूं रामु न करसि भतारा ।
जग-जीवन प्रान अधारा ॥ १ ॥

रहाउ

तेरे गलहि तउकु पग बेरी ।
तू घर घर रमईआ फेरी ।
तू अजहु न चेतसि चेरी
तू जमु पुरी है बपुरी है हेरी ॥ २ ॥
प्रभ करन करावनहारी ।
किआ चेरी हाथि विचारी ।
सोई सोई जागी ।
जितु लाई तितु लागी ॥ ३ ॥
चेरी तै सुमति कहा ते पाई ।
जा भरम की लीक मिटाई ॥
सु रस कबीरै जानिआ ।
मेरो गुर प्रसादि मनु मानिआ ॥४॥६॥

(६२)

दास-भाव ।

(गौड़ी)

फुरमानु तेरा सिरै ऊपरि

फिरि न करत बीचार ।

तुही दरीआ तुही करीआ

तुझै तै निसतार ॥ १ ॥

बंदे बंदगी इकतीआर ।

साहिबु रोसु धरउ कि पिआरु ॥ १ ॥

रहाउ

नामु तेरा आधारु मेरा

जिउ फूलु जई है नारि ।

कहि कबीर गुलामु घरका

जीआइ भावै मारि ॥२॥१८॥६६॥

(६३)

चरण-कमल-प्रेम ।

(बिलावल)

चरन कमल जा कै रिदै बसहि

सो जनु किउ डोलै देव ।

मानौ सभ सुख नउ निधि ताकै

सहजि सहजि जसु बोलै देव ॥१॥

रहाउ

तब इह मति जउ सभ महि पेखै

कुटिल गांठि जब खोलै देव ।

बारंबार माइआ ते अटकै

लै नरु जा मनु तोलै देव ॥ १ ॥

जह उह जाइ तही सुख पावै
माइआ तास न झोलै देव ।
कहि कबीर मेरा मनु मानिआ
राम प्रीति कीओ लै देव ॥२॥१२॥

(६४)

कर्त्तव्य विमूढ ।

केदारा

काम क्रोध त्रिशना के लीने
गति नही एकै जानी ।
फूटी आखै कछू न सूझै
बूडि मुए बिनु पानी ॥ ३ ॥
चलत कत टेढे टेढे टेढे ।
असति चरम बिसटा के मूंदे
दुरगंप ही के बेढे ॥ १ ॥

रहाउ

राम न जपहु कवन भ्रम भूले
तुम ते काल न दूरे ।
अनक जतन करि इह तनु राखहु
रहै अवसथा पूरे ॥ २ ॥
आपन कीआ कछू न होवे
किआ को करै परानी ।
जा तिसु भावै सतिगुर भेटे

एको नाम बखानी ॥ ३ ॥
बलूआ के घरूआ महि बसते
फुलवत देह अइआने
कहु कबीर जिह राम न चेतिओ
बूडे बहुत सिआने ॥ ४ ॥ ४ ॥

(६५)

राम स्मरण बिना जन्म अकारथ है ।

केदारा

चार दिन अपनी
नउबति चले बजाइ ।
इतनकु खटीआ गठीआ मटीआ
संगि न कछु लै जाइ ॥ १ ॥

रहाउ

देहरी बैठी मिहरो रोवै
दुआरै लउ संग माइ ।
मरहटि लगि सभ कुटंबु मिलि
हंसु इकेला जाइ ॥ १ ॥
वै सुत वै वित वै पुर पाटन
बहुरि न देखै आइ ।
कहतु कबीर राम की न सिमरहु
जनम अकारथ जाइ ॥२॥६॥

(६६)

कामासक्त ।

केदारा

टेढी पाग टेढे चले
लागे बीरे खान ।
भाउ भगति सिउ काज न कछू ऐ
मेरो कामु दीवान ॥ १ ॥
राम बिसारिओ है अभिमानि ।
कनिक कामिनी महा सुन्दरी
पेखि पेखि सचु मानिआ ॥ १ ॥

रहाउ

लालच झूठ विकार महामद
इह विधि अउध बिहानि ।
कहि कबीर अन्त की बेर
आइ लागो कालु निदानि ॥ २ ॥ ५ ॥

(नं० ६७)

सती और योद्धा की भांति निर्भय होकर परमेश्वर के सम्मुख जाओ ।

(गौड़ी)

मन रे छाडहु भरमु प्रगटु होइ नाचहु
इआ माइआ के डांडे ।
सूरु कि सनमुख रण ते डरपै
सती कि सांचै भांडै ॥ १ ॥

डगमग छाडि रे मन बउरा ।
अब तउ जरे मरे सिधि पाईऐ
लीनो हाथि संधउरा ॥ १ ॥

रहाउ

काम क्रोध माइआ के लीने
इआ बिधि जगतु बिगूता ।
कहि कबीर राजा राम न छाडउ
सगल ऊच ते ऊचा ॥२॥२॥१७॥६८॥

(नं० ६८)

हरि-प्रेम तथा हरिभक्ति से उद्धार होगा

(गौड़ी)

जेते जतन करत ते डूबे
भवसागर नहीं तारिओ रे ।
करम धरम करतो बहु संजम
अहं बुधि मनु जारिआ रे ॥ १ ॥
सास ग्रास को दातो ठाकुरु
सो किउ मनहु बिसारिओ रे ।
हीरा लाल अमोल जनमु है
कउडी बदलै हारिओ रे ॥ १ ॥

रहाउ

त्रिशना त्रिषा भूख भ्रमि लागी
हिरदै नाहि बीचारिओ रे ।

उनमत मान हिरिओ मन माही
गुर का शबदु न धारिओ रे ॥ २ ॥
सुआद लुभत इन्द्री रस प्रेरिओ
मदरस लैत बिकारिओ रे ।
करम भाग संतन संगाने
काषट लोह उधारिओ रे ॥ ३ ॥
धावत जोनि जनम भ्रमि थाके
अब दुख करि हम हारिओ रे ॥
कहि कबीर गुर मिलत महारस,
प्रेम भगति निसतारिओ रे ॥४॥१॥६॥५६॥

(६६)

गुरू-ज्ञानाञ्जन

(मारू)

बनहि बसे किउ पाईऐ
जउ लउ मनहु न तजहि बिकार ।
जिह घर बनु समसरि कीआ
ते पूरे संसार ॥ १ ॥
सार सुख पाईऐ रामा ।
रंगि रवहु आतमै रामा ॥ १ ॥
रहाउ
जटा भसम लेपन कीआ
कहा गुहा महि बासु ।

मन जीते जगु जीतिआ
जाते बिखिआ ते होइ उदासु ॥ २ ॥
अंजनु देह सभै कोई
टुकु चाहन माहि बिडानु ।
गिआन अंजन जिह पाइआ
ते लोइन परवानु ॥ २ ॥
कह कबीर जब जानिआ
गुर गिआनु दीआ समझाइ ।
अंतर गति हरि भेटिआ
अब मेरा मन कतहू न जाइ ॥४॥२॥

(१००)

कर्मानुसार फल मिलता है ।

सूही

अमलु सिरहानो लेखा देना ।
आए कठिन दूत जम लेना ॥
किआ तै खटिआ कहा गवाइआ ।
चलहु शिताब दीबानि बुलाइआ ॥१॥
चलु दर हालु दीवानि बुलाइआ ।
हरि फरमानु दरगाह का आइआ ॥ १ ॥
(रहाउ)
करउ अरदासि गाव किछु बाकी ।
लेउ निबेरि आजु की राती ।

किछु भी खरचु तुमारा सारउ ।
सुबह निवाज सराइ गुजारउ ॥ २ ॥
साध संगि जा कउ हरि रंगु लागा ।
धनु धनु सो जनु पुरखु सभागा ॥
ईत ऊत जन सदा सुहेले ।
जनमु पदारथु जीति अमोले । ३ ॥
जागतु सोइआ जनमु गवाइआ ।
मालु धनु जोरिआ भइआ पराइआ ।
कह कबीर तेई नर भूले ।
खसमु बिसारि माटी संगि रूले ॥

(१०१)

हरिनाम-वाणिज्य ।

केदारा

किनही बनजिआ कांसी तांबा
किनही लउंग सुपारी ।
संतहु बनजिआ नामु
गोविद का ऐसी खेप हमारी ॥ १ ॥
हरि के नाम के बिआपारी ।
हीरा हाथि चढ़िआ निरमोलकु छूटि गई संसारी ॥१॥

रहाउ

साचे लाए तउ सचि लागे
साचे के बिउहारी ।

साची वसतु के भार चलाए
पहुंचे जाइ भंडारी ॥ २ ॥
आपहि रतन जवाहर मानिक
आपै है पासारी ।
आपै दहदिसि आप चलावै
निहचल है बिआपारी ॥ ३ ॥
मनु करि बैल सुरति करि पैडा
गिआन गोनि भरि डारी ।
कहतु कबीर सुनहु रे संतहु
निबही खेप हमारी ॥ ४ ॥ २ ॥

(१०२)

हरिभक्ति बिना जप, तप, संयम वृथा है।

गौड़ी-पूर्बी

सुरग बासु न बाछीए डरीऐ न नरकि निवासु ।
होना है सो होई है मनहि न कीजै आस ॥ १ ॥
रमईआ गुन गाईऐ जाते पाईऐ परम निधानु ॥१॥

रहाउ

किआ जपु किआ तपु संजमो किआ बरतु किआ इसनानु।
जब लगु जुगति न जानीए भाउ भगति भगवान ॥ २ ॥
संपै देखि न हरखीए बिपति देखि न रोइ ।
जिउ संपै तिउ बिपति है बिध ने रचिआ सो होइ ॥ ३ ॥
कहि कबीर अब जानिआ संतन रिदै मझारि ।

सेवक सो सेवा भले जिह घटि बसै मुरारि ॥४॥१॥१२॥६३॥

(१०३)

स्मृति प्रतिपादित कर्मकाण्ड बन्धन है

गौड़ी

बेद की पुत्री सिम्रति भाई ।
सांकत जेवरी लै है आई ॥ १ ॥
आपन नगर आप ते बांधिआ ।
मोह कै फाधि काल सरु सांधिआ ॥ १ ॥

रहाउ

कटी न कटै तूटि नह जाई ।
सा सापनि होइ जग कउ खाई ॥ २ ॥
हम देखत जिनि सभु जगु लूटिआ ।
कहु कबीर मै रामु कहि छूटिआ ॥३॥३०॥

(१०४)

गोबिन्द-भक्ति जन्म मरण के भय को दूर कर देती है ।

(बिलावल)

जनम मरण का भ्रमु गइआ गोबिंद लिव लागी ।
जीवत सुंन समानिआ गुर साखी जागी ॥ १ ॥

रहाउ

कासी ते धुनि उपजै धुनि कासी जाई ।
कासी फूटी पंडिता धुनि कहां समाई ॥ १ ॥

त्रिकुटी संधि मै पेखिआ घटहू घट जागी ।
ऐसी बुधि समाचरी घट माहि तिआगी ॥ २ ॥
आप आप ते जानिआ तेजु तेजु समाना ।
कहु कबीर अब जानिआ गोबिंद मन माना ॥३॥११॥

(१०५)

योगी प्रति उपदेश ।

केशव योगीराज हैं ।

बिलावल

डंडा मुद्रा खिंथा आधारी ।
भ्रम कै भाइ भवै भेख धारी ॥ १ ॥
आसन पवन दूरि करि बवरे ।
छोडि कपटु नित हरि भजु बवरे ॥ १ ॥

रहाउ

जिह तू जाचहि सो त्रिभवन भोगी ।
कहि कबीर केशो जगि जोगी ॥ २ ॥ ८ ॥

(०६)

गौड़ी

गगनि रसाल चुऐ मेरी भाठी ।
संचि महा रसु तनु भइआ काठी ॥ १ ॥
उआ कउ कहीऐ सहज मतवारा ।
पीवत राम रसु गिआन बीचारा ॥ १ ॥
सहज कलालनि जउ मिलि आई

आनंदि माते अन दिनु जाई ॥ २ ॥
चीनत चीतु निरंजन लाइआ ।
कहु कबीर तौ अनभउ पाइआ ॥ ३ ॥ २७ ।

(१०७)

रामकली

काइआ कलालनि लाहनि मेलउ
गुर का शबदु गुड़ कीनु रे ।
त्रिशना काम क्रोध मद मतसर
काटि काटि कसु दीनु रे ॥ १ ॥
कोई है रे संतु सहज सुख अंतरि
जा कउ जपु तपु देउ दलाली रे ।
एक बूंद भरि तनु मन देवउ
जो मदु देइ कलाली रे ॥ १ ॥

रहाउ

भवन चतुरदस भाठी कीनी
ब्रहम अगनि तनु जारी रे ।
मुद्रा मदक सहज धुनि लागी
सुखमन पोचनहारी रे ॥ २ ॥
तीरथ बरत नेम सुचि संजम रवि ससि गहनै देउ रे ।
सुरति पिआल सुधारस अंम्रित इहु महा रस पेउ रे ॥३॥
निझर धार चुए अति निरमल इह रस मनूआ रातो रे ।
कह कबीर सगले मद छूछे इहै महारसु साचो रे ॥४॥१॥

(१०८)

(रामकली)

गुड़ करि गिआन धिआनु करि महूआ भाउ भाठी मनधारा।
सुख मन नारी सहज समानी पीवे पीवनहारा ॥ १ ॥

अउधू मेरा मनु मतवारा।
उनमद चढा मदन रसु चाखिआ
त्रिभुवन भइआ उजिआरा ॥ १ ॥
रहाउ

दुइ पुरि जोरि रसाई भाठी पीउ महारस भारी।
काम क्रोध दुइ कीए जलेता छूटि गई संसारी ॥२॥
प्रगट प्रगास गिआन गुर गंमित सतिगुर ते सुधि पाई।
दास कबीर तासु मद माता उचकि न कबहू जाई ॥३॥२॥

(१०६)

गौड़ी वैरागणि

उलटत पवन चक्र खटु भेदे सुरति सुंन अनुरागी।
आवै न जाइ मरै न जीवै तासु खोजु वैरागी ॥ ६ ॥
मेरे मन मन ही उलटि समाना।
गुर परसादि अकलि भई अवैर नातरु था बेगाना ॥१॥
रहाउ

निवरै दूरि दूरि फुनि निवरै जिनि जैसा करि मानिआ।
अलउती का जैसे भइआ बरेडा जिनि पीआ तिनि जानिआ२
तेरी निरगुन कथा काइ सिउ कहीऐ ऐसा कोई विवेकी।
कहु कबीर जिनि दीआ पलीता तिन तैसी झल देखी।३।३।४७

(११०)

योग साधन ।

रामकली

मुंद्रा मानि दइआ करि झोली पत्रका करहु बीचारु रे ।
खिंथा इहु तनु सीअउ अपना नामु करउ आधारु रे ॥१॥
ऐसा जोग कमावउ जोगी ।
जप तप संजमु गुरमुखि भोगी ॥ १ ॥

रहाउ

बुधि विभूति चढावउ अपनी सिंगी सुरति मिलाई ।
करि बैरागु फिरउ तनि नगरी मनकी किंगरी बजाई ॥२॥
पंच ततु लै हिरदै राखहु रहै निरालमु ताड़ी ।
कहत कबीर सुनहु रे संतहु धरम दइआ करि बाड़ी ।३।७॥

(१११)

एक योगी की मृत्यु से शिक्षा ।

[ईश्वर का मर्म कोई नहीं जान सकता]

गौड़ी

जह कछु अहा तहा किछु नाही पंच ततु तह नाही ।
इड़ा पिंगला सुखमन बंदे ए अवगन कत जाही ॥ १ ॥
तागा टूटा गगनु बिनसि गइआ
तेरा बोलतु कहा समाई ।
एह संसा मोकउ अनुदिनु बिआपै
मो कउ को न कहै समझाई ॥ १ ॥

रहाउ

जह बरुबंडु पिंड तह नाहीं रचनहारु तह नाही।
जोड़नहारो सदा अतीता इह कहीए किसु माही ॥२॥
जोड़ी जुड़ै न तोड़ी तूटै जब लग होई बिनासी।
काको ठाकुर काको सेवकु को काहू कै जासी ॥ ३ ॥
कहु कबीर लिव लागि रही है जहां बसै दिन राती।
उआका मरमु ओही परजानै उह तउ सदा अविनाशी४।१।५२

(११२)

प्रणायाम।

(ब्रह्मज्ञान)

रामकली (घर २)

बंधचि बंधनु पाइआ।
मुकतै गुरि अनलु बुझाइआ॥
जब नखशिख इह मन चीना।
तब अंतरि मजनु कीना ॥ १ ॥
पवन पति उनमनि रहनु खरा।
नही मिरतु न जनमु जरा ॥ १ ॥

रहाउ

उलटीले सकति सहारं।
पैसीले गगन मझारं॥
बेधीअले चक्र भुअंगा।
भेटीअले राइ निसंगा ॥ २ ॥

चूकीअले मोहमइ आसा ।
ससि कीनो सूर गिरासा ॥
जब कुंभकु भरि पुरि लीणा ।
तह बाजे अनहद बीणा ॥ ३ ॥
बकतै बकि शबदु सुनाइआ ।
सुनतै सुनि मंनि बसाइआ ॥
करि करता उतरसि पारं ।
कहै कबीरा सारं ॥४॥१॥१०॥

(नं० ११३)

(ब्रह्मज्ञान)

केदारा

री कलवारि गवारि मूढमति उलटो पवनु फिरावउ ।
मन मतवार मेर सर भाठी अंम्रित धार चुआवउ ॥ १ ॥
बोलहु भईआ राम की दुहाई ।
पीवहु संत सदा मति दुरलभ सहजे पिआस बुझाई ॥१॥

रहाउ

भै बिचि भाउ भाइ कोऊ बूझहि हरिरस पावै भाई ।
जेते घट अंम्रित सभ ही महि भावै तिसहि पीआई ॥२॥
नगरी एकै नउ दरवाजे धावतु बरजि रहाई ।
त्रिकुटी छूटै दसवा दरु खुले ता मनु खीवा भाई । ३॥
अभैपद पूरि ताप तह नासे कहि कबीर बीचारी ।
उलट चलंते इह मद पाइआ जैसे खोंद खुमारी ॥४॥२॥

(११४)

(ब्रह्मज्ञान)

सोरठ

संतहु मन पवनै सुख बनिआ ।

किछु जोगु परापति गनिआ ।

रहाउ

गुर दिखलाई मोरी ।

जितु मिरग पड़त है चोरी ।

मूंद लीए दरवाजे ।

बाजीअले अनहद बाजे ॥ १ ॥

कुंभ कमलु जलि भरिआ ।

जलु मेटिआ ऊभा करिआ ॥

कहु कबीर जन जानिआ

जउ जानिआ तउ मन मानिआ ॥२॥१०॥

(११५)

शरीर रूपी ग्राम से उदासीनता

(मारु)

देही गावा जीउ धर महं तउ बसहि पंच किरसाना ।

नैनू नकटू स्रवनू रवनू रसपति इंद्री कहिआ न माना ॥१॥

बाबा अब न बसहु इह गाउ

घरी घरी का लेखा मागै काइथु चेतू नाउ ॥१॥

रहाउ

धरमराइ जब लेखा मागै बाकी निकसी भारी ।

पंच क्रिसानवा भागि गये लै बाधिओ जीउ दरबारी ॥२॥

कहै कबीर सुनहु रे संतहु खेतही करहु निबेरा ।
अबकी बारि बखसि बंदे कउ बहुरि न भउजल फेरा ॥३।७

(११६)

शरीर रूपी कोष्ठ ।

गौड़ी

खटनेम कर कोठड़ी बांधी बसतु अनूपु बीच पाई ।
कुंजी कुलफु प्रान करि राखे करते बार न लाई ॥१॥
अब मन जागत रहु रे भाई ।
गाफलु हुइ कै जनमु गवाइओ चोरु मुसै घरु जाई ॥१॥

रहाउ

पंचू पहरूआ दर महि रहिते तिनका नहीं पतीआरा ।
चेति सुचेत चित होइ रहु तउ लै परगास उजारा ॥२॥
नउ घर देखि जु कामनी भूली बसतु अनूप न पाई ।
कहत कबीर नवै घर मूसे दसवैं ततु समाई ।३।२२।७३।

(११७)

शरीर रूपी ताना ।

(गौड़ी)

गज नव दस गज इकीस पुरीआ एक तनाई ।
साठ सूत नव खंड बहतरि पाटु लगो अधिकाई ॥१॥
गई बुनावन माहो । घर छोड़िये जाइ जुलाहो ॥१॥

(रहाउ)

गजी न मिनीए तोलि न तुलीऐ पाचनु सेर अढाई ।

जो करि पाचनु बेगि न पावै झगरु करै घर हाई ॥ १ ॥
दिन की बैठ खसम की बरकस इह बेला कत आई ।
छूटे कूंडे भीगे पुरीआ चलिओ जुलाहो रिसाई ॥ २ ॥
छोछी नली तंतु नहीं निकसै नतरु रही उरझाई ।
छोडि पसारु ईहा रहु बपुरी कहु कबीर समुझाई ।४।३।५४

(११८)

अनुभव ।

गौड़ी

जीवत मरै मरै फुनि जीवै ऐसे सुनि समाइआ ।
अंजनि माहि निरंजनि रहीऐ बहुड़ि न भवजल पाइआ ॥१॥
मेरे राम ऐसा खीरु बिलोईऐ । गुरमति मनुआ
अस्थिरु राखहु इन विधि अंम्रितु पिओईऐ ॥ १ ॥

रहाउ

गुर कै बाणि बजर कल छेदी प्रगटिआ पद प्रगासा ।
सकति अधेर जेवड़ी भ्रम चूका निहचलु शिव घरि वासा २
तिनि बिनु बाणै धनुष चढाईऐ इह जगु बेधिआ भाई ।
दह दिस बूडी पवनु झुलावै डोरि रही लिवलाई ॥३॥
उनमनि मनूआ सुनि समाना दुविधा दुरमति भागी ।
कहु कबीर अनभउ इक देखिआ राम नाम लिव लागी।४।२।४६

(११९)

गूंगे का गुड़ ।

गौड़ी

जा गी कहहि जोगु भल मीठा अवरु न दूजा भाई ।
रुंडित मुंडित एकै शबदी एहि कहहि सिधि पाई ॥१॥
हरि बिनु भरमि भुलाने अंधा ।
जा पहि जाउ आप छुटकावनि ते बाधे बहु फंदा ॥१॥
रहाउ
जह ते उपजी तही समानी इहि बिधि बिसरी तबही ।
पंडित गुणी सूर हम दाते एहि कहहि बड हमही ॥२॥
जिसहि बुझाए सोई बूझै बिनु बूझै किउ रहीऐ ।
सतिगुरु मिलै अंधेरा चूकै इनि बिधि माणकु लहीऐ ॥३॥
तजि बावे दाहने बिकारा हरिपदु द्रिढ़ करि रहीऐ ।
कहु कबीर गूंगे गुड़ खाइआ पूछे ते किआ कहिऐ ।४।७।५१

(१२०)

गुरुभक्ति ।

रामकली

संता मानउ दूता डानउ इह कुटवारी मेरी ।
दिवस रैनि तेरे पाउ पलोसउ केस चवरि करि फेरी ॥१॥
हम कूकर तेरे दरबारि । भउकहि आगै बदनु पसारि ॥१॥
रहाउ
पूरब जनम हम तुमरे सेवक अब तउ मिटिआ न जाई ।
तेरे दुआरै धुनि सहज की माथे मेरे दगाई ॥ २ ॥
दागे होहि सुरन महि जूझहि बिनु दागे भगि जाई ।
साधू होइ सु भगति पछानै हरि लए खजानै पाई ॥३॥

कोठरे महि कोठरी परम कोठी बीचारि।
गुर दीनी बसतु कबीर कउ लेवहु बसतु समारि ॥४॥
कबीर दीई संसार कउ लीनी जिस मसतकि भागु।
अंम्रितु रसु जिनि पाइआ थिर ताका सोहागु ॥५॥४॥

(१२१)

ज्ञान-प्रभञ्जन।

(गौड़ी)

देखो भाई ज्ञान की आई आंधी।
सभै उड़ानी भ्रम की टाटी रहै न माइया बांधी ॥ १ ॥

रहाउ

दुचिते की दुइ थूनि गिरानी मोह बलेडा टूटा।
तिशना छानि परी धर उपरि दुरमति भांडा फूटा ॥१॥
आंधा पाछै जो जलु बरखा तिहि तेरा जनु भीना।
कह कबीर मनि भइआ प्रगासा उदै भान जब चीना २।४३

(१२२)

सावधानता।

वेदरूपी पहरिया

रामकली

दुनीआ हुशीआर बेदार जगत मुसीअत हउ रे भाई।
निगम हुशीआर पहरूआ देखते जमु लै जाई ॥ १ ॥

रहाउ

नीब भइओ आंबु आंब भइओ नीबा केला पाका झारि।

नालीएर फलु सेबरि पाका मूरख मुगध गवारि ॥ १ ॥

हरि भइओ खांड रेतु महि बिखरिऔ
हसती चुनिओ न जाई ।
कहि कबीर कुल जाति पांति तजि
चौटी होइ चुनि खाई ॥२॥३॥१२॥

(१२३)

परमात्मा सर्वव्यापक है ।

गोंड

आकासि गगनु पातालि गगन है
चहु दिसि गगनु रहाइले ।
आनद मूलु सदा पुरषोतमु
घटु बिनसै गगनु न जाइले ॥ १ ॥

मोहि बैरागु भइआ । इहु जीउ आइ कहा गइओ ॥ १ ॥

रहाउ

पंच ततु मिलि काइआ कीनी ततु कहा ते कीनु रे ।
करमबध तुम जीउ कहतहो करमहि किनि जीउ दीनुरे ॥२॥
हरि महि तनु है तन महि हरि है सरब निरंतर सोइरे ।
कहि कबीर राम नामु न छोडउ सहजे होइ सु होइरे ।३।२

(१२४)

श्रीकृष्ण दुर्योधन संवाद ।

[श्रीकृष्ण भगवान् को जाति प्यारी नहीं किंतु भक्ति प्यारी है]

"दुर्योधन को मेवा त्यागयो शाक विदुर घर खायो"
"जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभु पायो"

मारु

राजन कउन तुमारै आवै।
ऐसो भाउ बिदर का देखिओ ओहु गरीबु मोहि भावै ॥१॥

रहाउ

हसती देखि भरम ते भूला श्रीभगवान न जानिआ।
तुमरो दूध बिदर को पानो अंम्रितु करि मैं मानिआ ॥१॥
खीर समानि सागु मैं पाइआ गुन गावत रैनि बिहानी।
कबीर को ठाकुरु अनदबिनोदी जाति न काहू को मानी २।६

(१२५)

नृसिंहावतार।

प्रह्लाद-हिरण्यकशिपु कथा।

बसंत

प्रहलाद पठाए पढ़न शाल। संगि सखा बहु लीए बाल॥
मो कउ कहा पढ़ावसि आल जाल।
मेरी पटीआ लिखि देहु श्रीगोपाल॥ १ ॥
नहीं छोडउ रे बाबा राम नामु।
मेरो अउर पढ़न सिउ नहीं कामु॥ १ ॥

रहाउ

संडै मरकै कहिओ जाइ। प्रहलाद बुलाए बेगि धाइ॥
तू राम कहन की छोडु बानि।
तुझि तुरत छडाऊ मेरो कहिओ मानि॥ २ ॥

मो कउ सतावहु बार बार ।
प्रभि जल थल गिरि कीए पहार ॥
इकु रामु न छोडउ गुरहि गारि ।
मो कउ घालि जारि भावै मारि डारि ॥ ३ ॥
काढ़ि खड़गु कोपिओ रिसाइ ।
तुझ राखनहारो मोहि बताइ ॥
प्रभु थंभ ते निकसे कै बिसथार ।
हरनाखसु छेदिओ नख बिदार ॥ ४ ॥
ओइ परम पुरख देवाधिदेव ।
भगति हेत नरसिंघ भेव ॥ ४ ॥
कहि कबीर को लखै न पार ।
प्रहलाद उधारे अनिक बार ॥ ५ ॥ ४ ॥

(१२६)

एक मुल्ला प्रति उपदेश ।

तिलंग

बेद कतेब इफतरा भाई दिल का फिकरु न जाइ ।
टुकुदम करारी जऊ करउ हाजिर हजूरि खुदाइ ॥ १ ॥
बंदे खोज दिल हर रोजु ना फिरु परेशानी माहि ।
इह जु दुनीआ सिहरु मेला दसतगीरी नाहि ॥

(रहाउ)

दरोगु पड़ि पड़ि खुशी होइ बेखबर बादु बकाहि ।
हकु सचु खालकु खलक मिआने सिआम मूरति नाहि २

आसमान मिआने लहंग दरीआ गुसल करदन बूद ।
करि फिकरु दाइम लाइ चशमे जह तह मउजूद ।। ३ ।।
अलाह पाकं पाक है शक करउ जे दूसर होइ ।
कबीर करमु करीमु का उहु करै जानै सोइ ।।४।।१।।

(१२७)

एक ब्राह्मण को हरि-भजन करने का उपदेश ।

रामकली

जिह मुख बेद गइत्री निकसै सो किउ ब्रहमनु बिसरु करै ।
जाकै पाइ जगतु सभ लागै सो किउ पंडितु हरि न कहै ।१।
काहे मेरे बाह्मन हरि न कहहि ।
राम न बोलहि पांडे दोजकु भरहि ।। १ ।।

रहाउ

आपन ऊच नीच घरि भोजनु
हठे करम करि उदरि भरहि ।
चउदस अमावस रचि रचि मांगहि
कर दीपकु लै कूप परहि ।। २ ।।
तूं ब्राहमनु मैं काशी का जुलाहा
मुहि तोहि बराबरी कैसे कै बनहि ।
हमरे राम नाम कहि उबरे
बेद भरोसे पांडे डूबि मरहि ।। ३ ।। ६ ।।

(१२८)

हज निषेध

हमारा पीताम्बर पीर गोमती नदी के तीर पर
द्वारका में निवास करता है !

(आसा)

हज हमारा गोमती तीर । जहा बसहि पीतंबर पीर ॥१॥
वाहु वाहु किआ खूब गावता है ।
हरि का नामु मेरे मनि भावता है ॥ १ ॥

रहाउ

नारद सारद करहि खवासी ।
पास बैठी बीबी कवला दासी ॥ २ ॥
कंठे माला जिहवा रामु ।
सहस नाम लै लै करउ सलामु ॥ ३ ॥
कहत कबीर राम गुन गावउ ।
हिन्दू तुरक दोउ समझाउ ॥४ ४॥१३ ।

(१२९)

दृढ विश्वास ।

गौड़ी

जा कै हरि सा ठाकुर भाई । मुकति अनंत पुकारणि जाइ १
अब कहो राम भरोसा तोरा । तब काहू का कवन निहोरा १

रहाउ

तीन लोक जा कै हहि भार । सो काहे न करै प्रतिपार ।
कहु कबीर इक बुधि बीचारी । किआ बसु जउ बिखु दे
महतारी ॥२॥१२॥

(१३०)

काशीधाम के पंडित मुकुंदलाल को उपदेश।

आसा

हम घरि सूतु तनहि नित ताना कंठि जनेऊ तुमारे।
तुम तउ बेद पढ़हु गाइत्री गोबिंद रिदै हमारै॥ १॥
मेरी जिहबा बिशनु नैन नाराइण हिरदै बसहि गोबिंदा।
जमदुआरु जब पूछसि बवरे तब किआ कहसि मुकंदा॥१॥

रहाउ

हम गोरू तुम गुआर गुसाई जनम जनम रखवारे।
कबहूं न पार उतार चराइहु कैसे खसम हमारे॥ २॥
तू बाहमनु मैं काशी का जुलहा बूझहु मोर गिआना।
तुम तउ जाचे भूपति राजे हरि सिउ मोर धिआना॥३॥४॥२१६

(१३४)

हिन्दु मुसलमानों से उदासीनता।

भैरव

उलटि जाति कुल दोऊ बिसारी।
सुंनि सहजि महि बुनति हमारी॥ १॥
हमरा झगरा रहा न कोऊ।
पंडित मुलां छाडे दोऊ॥ १॥

रहाउ

बुनि बुनि आपु आपि पहिराव।
जह नहीं आपु तहा होइ गावउ॥ २॥
पंडित मुलां जो लिखि दीआ।

छाडि चले हम कछू न लीआ ॥ ३ ॥
रिदै इखलासु निरखि लै मीरा ।
आपु खोजि खोजि मिले कबीरा ॥४॥७॥

(१३२)

अन्न-महिमा ।

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न संभवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः ॥

श्रीमद्भगवद्गीता (अ० ३ श्लोक १४)

गोंड

धंनु गुपाल धंनु गुरदेव ।
धंनु अनादि भूखे कवल टहकेव
धंनु ओइ संत जिन ऐसी जानी ।
तिन को मिलिबो सारिंग पानी ॥ १ ॥
आदि पुरख ते होइ अनादि ।
जपीऐ नामु अंन कै सादि ॥ १ ॥
जपीए नामु जपीए अंनु ।
अंभै कै संगि नीका वंनु ॥
अंनै बाहरि जो नर होवहि ।
तीन भवन महि अपनी खोवहि ॥ २ ॥
छोडहि अंनु करहि पाखंड ।
ना सोहागनि ना ओहि रंड ॥
जग महि बकते दूधा धारी ।

गुपती खावहि वटिका सारी ॥ ३ ॥
अंनै बिना न होइ सुकालु ।
तजिए अंनि न मिले गुपालु ॥
कहु कबीर हम ऐमे जानिआ ।
धंनु अनादि ठाकुर मनु मानिआ ॥४॥८॥११

(१३३)

जीवात्मा का स्वरूप ।

गौंड

ना इहु मानसु ना इहु देउ । न इहु जती कहावै सेउ ॥
न इहु जोगी ना अवधूता । ना इस माइ न काहू पूता ॥१॥
इआ मंदर महि कौन बसाई । ता का अंतु न कोऊ पाई ॥१
ना इहु गिरही ना ओदासी । न इहु राज न भीख मंगासी ।
न इसु पिंडु न रकतू राती । ना इहु ब्रहमनु ना इहु खाती ॥
ना इहु तपा कहावै सेखु । न इहु जीवै न मरता देखु ।
इस मरते कउ जो कोऊ रोवै । जो रोवै सोई पति खोवै ।३
गुर प्रसादि मैं डगरो पाइआ । जीवन मरनु दोऊ मिटवाइआ॥
कह कबीर इहु राम की अंसु ।
जस कागद पर मिटै न मंसु ॥४॥२॥५॥

(१३४)

(गौड़ी)

कंचन सिउ पाईऐ नही तोलि ।
मनु दे रामु लीआ है मोल ॥ १ ॥

अब मोहि रामु अपना करि जानिआ ।
सहज सुभाइ मेरा मनु मानिआ ।।१।।
ब्रहमै कथि कथि अंतु न पाइआ ।
राम भगति बैठे घरि आइआ ।। २ ।।
कहु कबीर चंचल मति तिआगी ।
केवल राम भगति निज भागी ।।३।।१९।।

तृतीय भाग।

महात्मा कबीरदास का संक्षिप्त जीवनचरित्र।

उत्पत्ति।

कबीरदास जी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लोगों के अनेक मत भेद हैं कोई कहता है, कि वे एक कंवारी ब्राह्मण कन्या के गर्भ से उत्पन्न हुए थे और उस कन्या के माता-पिता ने लोक-लज्जा के भय से उन्हें लहरतारा के तालाब के किनारे पर फैंक दिया था। कोई लिखता है कि उनका जन्म विधवा ब्राह्मणी के उदर से हुआ था जिसने लोकापवाद के डर से उन्हें लहरतारा के पोखर के पास डाल दिया था, कोई मानता है कि कबीर साहिब की उत्पत्ति मुसलमानों के घर में हुई थी। किसी का विश्वास है कि उनके माता पिता थे ही नहीं ऐसे ही तालाब में से निकल पड़े थे। और कोई उन को अमैथुनी सृष्टि की रचना मानता है। सारांश यह है कि जितने मुंह उतनी बातें। सच तो यह है कि उपर्युक्त समस्त सिद्धान्त कल्पित और निर्मूल हैं और उन पर विश्वास किया ही नहीं जा सकता। वास्तव में कबीर जी के महत्व को न्यून करने के लिये यह सब बातें घड़ी गई हैं जो कि सर्वथा निस्सार और तत्व रहित हैं।

चूंकि कबीर जी सच्चे हरिभक्त, महात्मा उदार, सदाचारी, सत्यवादी, निराभिमानी, समदर्शी, विद्वान् और ब्रह्मज्ञानी थे। सद्गुणों के कारण उनका यश देश देशान्तरों में फैल गया था। वे निर्पक्ष महात्मा थे और वे हिन्दुओं और मुसलमानों को एक आंख से देखा करते थे और दोनों धर्मों के अनुयाइयों में जो २ त्रुटियां वा कुरीतियां देखते थे उनका खण्डन धड़ल्ले के साथ किया करते थे। वे सर्व प्रिय और प्रत्येक व्यक्ति के साथ प्रेम पूर्वक वार्तालाप किया करते थे। उदार और दानी भी ऐसे थे कि काशी भर में कोई साधु, सन्त, ब्राह्मण सन्यासी और अभ्यागत ऐसा न था जो उनके पास याचना के लिये आया हो और खाली हाथ वापस गया हो। ब्रह्मभोज, साधु सेवा और अतिथि सत्कार उनकी दिनचर्य्या के मुख्य अंग थे। सन्त समागम और सत्सङ्गति से उनका विशेष प्रेम था। उन के स्थान पर निरंतर हरिकीर्त्तन की ध्वनि होती रहती थी और धर्म की तृष्णा से तृषित लोग दूर २ देशों से आकर अपनी तृषा बुझाया करते थे और कबीर जी के सुधा-मय वचनों से शान्ति प्राप्त किया करते थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तथा आस्तिक यवन उनके पवित्र दर्शन मात्र से कृत-कृत्य होने की आकांक्षा रखा करते थे। जिज्ञासुओं के ठट्ठ के ठट्ठ उनके द्वार पर हर समय खड़े रहते थे। एक महान् व्यक्ति में जो २ सद्गुण होने चाहियें वे सब के सब महात्मा कबीरदास जी में मौजूद थे। संसारोपकार के कार्य्यों में निमग्न होने के कारण लोग उनकी प्रशंसा मुक्त कण्ठ से किया करते थे और घर २ में उनके गुणानुवाद गाए जाया करते थे।

कबीर जी की कीर्ति-पताका आकाश मण्डल में फहरा रही थी जिस को देख देखकर कुटिल पुरुषों की छातियों पर सांप से लोट रहे थे। उनके तेज ने काशी के अन-

धिकारी आचार्यों की कीर्ति को आच्छादित कर दिया था। वे उस तप-स्वरूप मार्तण्ड के सम्मुख खद्योत के समान प्रभा रहित दिखाई देने लगे थे और अस्त होते हुए चन्द्रमा के समान कान्तिहीन हो गए थे। इसलिए उन सब के हृदय में ईर्षा की अग्नि भड़क उठी और वे अकारण ही कबीर जी के द्वेषी बन गए और उनको बदनाम करना शुरू कर दिया और अनेक प्रकार से उन को लाञ्छित करना आरम्भ कर दिया वास्तविक बातों को छुपा कर झूटी कहानियां घड़नी शुरू कर दीं और उन पर भान्ति भान्ति के दोषारोपण करने प्रारम्भ कर दिए। होलियों में कबीर साहिब की नकल उतारते और स्वांग निकालते। किसी दुर्जन को होली का भडवा (भडुआ) बनाते जो अपने आप को भक्त कबीर बतलाता और अनाप-शनाप बकता जाता। इस तरह विविध प्रकार की रीतियों से कबीर साहिब को उनके विपक्षियों ने बदनाम तथा दूषित किया। उन के माता पिता के सम्बन्ध में भी ऊ-पर की उड़ाना शुरू की। उन को कभी व्यभिचारिणी विधवा का पुत्र बताते थे कभी कुमारिका के गर्भ से उत्पन्न होना बताते थे, इस प्रकार भक्त जी पर लाञ्छन लगाने के अनेक ढंग निकाले और जनता के मन में भ्रम डालने की चेष्टा की, जिसका परिणाम यह हुआ कि असलीयत नष्ट हो गई और कबीर जी की उत्पत्ति भ्रमास्पद तथा संशय-प्रद हो गई। और अब यह अवस्था हो गई है कि कोई लेखक कबीर जी की उत्पति के सम्बन्ध में असलीयत की खोज लगाने का साहस नहीं कर सकता।

लेखक के पूज्य पितृव्य पण्डितवर श्री पण्डित तुलसीदासजी जो कि संस्कृत के अद्वितीय विद्वान् थे और श्री गुरु-ग्रन्थ साहिब के सुप्रसिद्ध ज्ञानी थे, कहा करते थे, कि महात्मा

कबीरदास जी के शत्रुओं ने उनके जन्म का विवादास्पद बना दिया है। वस्तुतः भक्त शिरोमणि कबीर जी ब्राह्मण कुलोत्पन्न थे, उनकी उत्पत्ति ब्राह्मण माता पिता से हुई थी और उनको हिन्दू जुलाहे (कोरी) ने पाला था।

कबीर जी के जन्म की जो कथा वे सुनाया करते थे वह ज्यों की त्यों यहां पर लिखी जाती है। आशा है पाठकबृन्द इस कथा को पढ़कर लाभ उठावेंगे॥

कथा।

श्री काशी जी में महर्षि स्वामी रामानन्द जी निवास किया करते थे, वे रामानुजाचार्य की शिष्य-परम्परा में से थे उनका मत वैष्णव था। वे बड़े सदाचारी तथा सत्यवादी ब्राह्मण थे। उन का पाण्डित्य अगाध था, उनकी विद्या की चर्चा समस्त भारतवर्ष में थी। वे बड़े उदार तथा विशाल-हृदय थे। वे बड़े धर्मात्मा और ईश्वर भक्त थे। उनकी कीर्ति दिग्दिगान्तरों में विस्तृत थी। वे अपने समय के महान् पुरुष थे उन के सहस्रों शिष्य थे और लोग बड़ी श्रद्धा के साथ उनके शिष्य बनना चाहते थे और उन से दीक्षा लेना सौभाग्य समझते थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र उनका शिष्यत्व ग्रहण कर चुके थे। शूद्रों को रामानुजीय सम्प्रदाय में सम्मिलित होने का अधिकार नहीं था परन्तु स्वामी रामानन्द जी ने इस बन्धन को तोड़ डाला और धर्मप्रचार के मार्ग में जो यह अकाट्य शृङ्खला पड़ी थी उस को जातीय-प्रेम की पैनी छेनी से काट कर दूर फेंक दिया। संकुचित भावों को हृदय से निकाल डाला और निर्भय होकर बड़ी उदारता के साथ शूद्रों को "राम नाम" गुरु मन्त्र देने का निमन्त्रण दिया और उनको शिष्य-मण्डली में प्रवेश करने के लिए विशेष रूप में घोषणा कराई। रामानन्द जी की घोषणा का सपदि प्रभाव हुआ और

हजारों शूद्र जाति के लोग श्री स्वामी रामानन्द के शिष्य बन गए। इस प्रकार रामानुजीय सम्प्रदाय के अन्तर्गत रामानन्दी शाखा सम्प्रदाय चल पड़ा ॥

चारों वर्णों के लोक महर्षि रामानन्द जी के शिष्य थे और उन की तन, मन तथा धन से सेवा किया करते थे उन के सेवकों में से एक ब्राह्मण दम्पति भी था जिन के सन्तान नहीं थी और वे पुत्र का मुख देखने के लिए मीन की भांति तड़पा करते थे। एक दिन दोनों ने अञ्जलि बांध कर श्री गुरुदेव से विनय की 'महाराज! हमारे कोई सन्तति नहीं। और हम सन्तान हीन होने के कारण अत्यन्त दुःखी हो रहे हैं। आप कृपा दृष्टि कीजिए और हमें पुत्र-प्राप्ति का वरदान दीजिए।" श्री रामानन्द जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और उनको कहा "तुम्हारे यहां एक पुत्र होगा, जो कि ईश्वर का परम भक्त होगा किन्तु तुम्हें उसका कोई सुख नहीं होगा क्योंकि वह शैशवावस्था में ही तुम से बिछुड़ जावेगा"। पति-पत्नी ने पुत्र का मुखारविन्द देखना ही सौभाग्य समझा और गुरु का धन्यवाद करते हुए अपने आश्रम को लौट आए।

ईश्वर की कृपा से ब्राह्मणी गर्भवती हो गई और नौ महीने पूर्ण होने के पश्चात् उसके एक सुन्दर बालक उत्पन्न हुआ। बालक का जन्म होते ही ब्राह्मण के आनन्द की सीमा न रही और वह योग्य उपहार लेकर गुरु रामानन्द जी की सेवा में जा उपस्थित हुआ। स्वामी जी को दण्डवत् प्रणाम किया और उपहार भेंट करके कहा--"स्वामी जी आपकी कृपा से मेरे गृह में बालक उत्पन्न हुआ है अतः आप उसको आशीर्वाद दें"

गुरु जी ने शिष्य को आशीर्वचन कहे और बालक को चिरञ्जीव तथा हरिभक्त होने का वर भी प्रदान किया। गुरु से

विदा हो ब्राह्मण प्रसन्नता पूर्वक अपने घर वापस आया और स्वामी जी का वर ब्राह्मणी को सुनाया ।

बालक का जन्म लिए थोड़े ही दिन बीते होंगे कि ब्राह्मणी बालक को लेकर गंगा-स्नान को गई । उसने बालक को वस्त्र में लपेट कर घाट पर लिटा दिया और स्वयम् जल में प्रवेश करके स्नान करने लगी, इतने में एक बन्दर वहां आया और बालक को उठा कूदता फांदता चलता बना । ब्राह्मणी ने बालक को छुड़ाने का बहुतेरा यत्न किया परन्तु उसका सारा परिश्रम निष्फल सिद्ध हुआ क्योंकि बन्दर देखते२ उसकी आंखों से ओझल हो गया और वह बेचारी सिर पीटती रह गई । घर में आकर ब्राह्मण को बालक के हरण का समस्त वृत्तान्त सुनाया । बापुरा ब्राह्मण हरिभावी को शिरोधारण करके चुप हो रहा और स्वामी जी के वर का स्मरण करके धैर्य का अवलम्बन किया ।

उधर बन्दर बालक को लिये छाती से लगाए उछलता कूदता लहरतारा तालाब पर आ पहुंचा और करवीर के पौधों में उस बच्चे को लिटा कर भाग गया करवीर के पौधों के बीच में पड़ा हुआ बालक रोने लगा उसी समय नेहरू नाम वाला एक जुलाहा वहां से गुजर रहा था उसने बालक के रोने की आवाज करवीर के पौधों में सुनी । वह शीघ्रता के साथ दौड़कर करवीरों के निकट आया तो उसने देखा कि एक बालक वस्त्र में लिपटा हुआ अंगूठा चूस रहा है ।

बालक को निर्जन स्थान में देखकर नेहरू चकित सा हो गया और विचारने लगा—"कि किसी निर्दई पुरुष ने कमल के समान अपने पुत्र को करवीरों में फेंक दिया है, मैं इसको उठाऊं या न उठाऊं" इस द्विविधा में घणी देर तक पड़ा सोचता रहा और अन्त में उसने निश्चय किया कि मेरे यहां सन्तान

नहीं भगवान् ने बड़ी कृपा की है जो मुझे अरविन्द के समान मुख वाला पुत्र दिया है। क्यों न मैं इसको उठा कर अपने घर ले जाऊं और अपनी स्त्री को पालने के लिये दूं? यह विचार कर उसने बालक को उठा लिया और घर में जाकर अपनी धर्म पत्नी की गोद में डाल कर कहा—"नारायण ने हम पर बड़ी कृपा की है जो हमको पुत्र को मुख कमल दिखलाया है. लहरतारा तालाब के पास करवीर के पौधों में अंगूठा चूसते हुए मैंने इस को प्राप्त किया है और उठाकर घर ले आया हूं। यह हमारा पुत्र है, इसका पालन पोषण करो। यही हमारा नाम-लेवा तथा पानी-देवा होगा यही हमारी सम्पत्ति का स्वामी होगा। अतः इसी को लाड लडाओ और इसी को अपने प्रेम का केन्द्र बनाओ। नीमा ने उत्तर दिया "मेरे स्तनों में तो दूध नहीं मैं इसको किस प्रकार पालूं"? नेहरू उसी समय नगर में गया, जल्दी से एक नवीन प्रसूता गौ खरीद लाया और स्त्री से बोला—"यह लो गाय! भगवान् ने बालक दिया है तो उसकी पालना के लिये गैया भी भेज दी है, इसका दूध पुत्र को पिलाओ"।

बालक को घर में आये अभी छः दिन ही बीते होंगे कि नेहरू नीमा ने उसका नामकरण संस्कार करना चाहा। कुल पुरोहित को बुलाकर बालक का नाम रखने के लिये कहा। चूंकि बालक करवीर के पौधों के बीच में से प्राप्त हुआ था इस लिये पण्डित जी ने उसका नाम करवीरदास रक्खा। नेहरू और नीमा ने यथाशक्ति धन देकर पण्डित जी को विदा किया।

करवीरों के बीच में जिस तिथि को बालक मिला था वह शुभ तिथि ज्येष्ठ शुदि पूर्णिमा थी और महाराज विक्रमादित्य का शुभ संवत् १४५५ था उस समय भारतवर्ष का शासन-कर्ता महमूद तुग़लक था जो कि नसीरउलदीन का

बेटा था इसके शासन-काल में ही तिमूरलंग ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था, गोया ईसवी सन् १३६८ था। इस लिये करवीरदास की जन्म-तिथि संवत् १४५५ की जेष्ठ शुक्ला पूर्णिमा है। कबीर-कसौटी में भी कबीर का जन्म काल यही लिखा है।

उपर्युक्त कथा से स्पष्ट सिद्ध होता है कि कबीरदास के जन्म दाता माता-पिता ब्राह्मण थे और नीमा और नेहरू उसके पालक मात्र थे जो कि जाति के हिन्दू जुलाहे थे जिनको कोरी कहा जाता है, वे कपड़ा बुनने का काम किया करते थे और काशीधाम में रहा करते थे। करवीरदास का नाम अपभ्रंश होकर कबीर दास हो गया और अन्त में केवल "कबीर" मात्र ही रह गया और इसी नाम से लोग उनको पुकारा करते थे।

बाल्यवस्था।

शैशवावस्था को समाप्त करके कबीर बाल्यावस्था को प्राप्त हुआ तो लगा राम नाम जपने। गली मुहल्ले में यदि कोई साधु भजन गाता हुआ आ जाता तो कबीर बड़े प्रेम के साथ उसके भजनों को सुनता और जब तक वह साधु उस गली में भजन गाता रहता तब तक कबीर उसके साथ लगा रहता और भजनों को सुन सुन कर अपने कानों को पवित्र करता और अपने साथियों को भी भजन गाने के लिये प्रेरणा करता जहां कहीं कथा या धर्मोपदेश होता कबीर वहां ही चला जाता और एकाग्र होकर सुनता रहता।

कबीर का ऐसा प्रेम देख कर पण्डित तथा महात्मा लोग कहा करते कि एक न एक दिन यह लड़का ईश्वर का परम भक्त प्रसिद्ध होगा और इसका यश दिग्दिगान्तरों में छा जायगा क्योंकि इसके लक्षण हरिभक्तों के से दीख पड़ते हैं यह सच्च है—'होनहार बिरवान के होत चीकने पात"।

गुरु-दीक्षा ।

श्री रामानन्द जी के उपदेश में कबीर ने एक बार सुना कि गुरु के बिना गति नहीं हो सकती और मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि वह किसी सिद्ध-पुरुष को गुरु धारण करे। कबीर ने आज तक किसी से गुरु मन्त्र नहीं लिया था वह रामानन्द जी को अपना गुरुदेव तो मानता था किन्तु नियमानुसार उन से गुरु दीक्षा नहीं ली थी। श्री रामानन्द जी के मुख से यह रहस्य की बात सुनकर कबीर के चित्त में यह दृढ़ सङ्कल्प उठा कि श्री रामानन्द जी को ही अपना गुरु बनाना चाहिए और उन से ही गुरु-दीक्षा लेनी चाहिये। फिर उस ने विचारा कि मैं किस तरह श्री रामानन्द जी से विनय करूं? मुझे शूद्र समझ कर कदाचित् वे मुझ से घृणा न करें और गुरुदीक्षा न दें। किन्तु कबीर का यह विचार निर्मूल था क्योंकि श्री रामानन्द जी हिन्दू जाति के सच्चे हितैषी थे और वह हिन्दूजाति का अभ्युदय चाहते थे, इस लिए उनका द्वार दलित जातियों के लिए हर समय खुला रहता था रामानन्द जी प्रथम कुलीन और सदाचारी ब्राह्मण थे जिन के दिल में शूद्र जातियों के अन्दर धर्म का प्रचार करने का ख्याल पैदा हुआ था और जिन्हों ने हिन्दू जाति की इस त्रुटि का अनुभव किया था। वे दूरदर्शी थे और उन्हों ने हिन्दूजाति के भविष्य का दूरदर्शिता के कारण पहले ही अनुभव कर लिया था। कबीर ने उन से गुरु दीक्षा लेने की एक अनोखी युक्ति निकाली और यह युक्ति अत्यन्त ही फलदायक सिद्ध हुई। श्री रामानन्द जी का नियम था कि वे प्रतिदिन सूर्योदय से पूर्व पतित-पावनी गङ्गा जी में स्नान करने के लिये मणिकर्णिका घाट पर जाया करते थे एक दिन अभी अंधेरा ही था कि कबीर जागा और मणिकर्णिका घाट पर

चला गया और घाट की सीढ़ी पर लेट गया। जब श्रीरामानन्द जी आए अन्धेरे में उनका पांव कबीर के सिर पर पड़ा। स्वामी जी "राम कहो रे राम के" कह कर अलग हो गए किन्तु कबीर जान-बूझ कर रोने लग गया जिस से स्वामी जी ने जाना कि "हमारा पांव लगने से इसके चोट आई है और वेदना के कारण रो रहा है"।

उनके हृदय में दया का सञ्चार हुआ और निकट आकर कबीर के सिर पर हाथ रख कर कहा 'बेटा! राम राम कह और शान्ति ग्रहण कर" गुरुदेव के उस के सिर पर हाथ फेरने और राम राम कहने की देर थी कि कबीर उठ खड़ा हुआ और स्वामी जी के चरणों को छू कर कहने लगा "स्वामिन! आप ने अत्यन्त अनुग्रह किया है कि मुझ अनाथ को राम नाम गुरु-मन्त्र देकर सनाथ किया है और मेरे सिर को कर कमलों से स्पर्श करके मुझे कृतार्थ किया है इस रीति से मैं आपका शिष्य हो गया हूं और आप मेरे श्री गुरुदेव हैं" स्वामी रामानन्द जी ने कबीर की दृढ़ भक्ति देख कर उसको परमाधिकारी समझा, और तथास्तु कह कर छाती से लगा लिया। जब उनको यह ज्ञात हुआ कि यह कबीरदास है तो वे अत्यन्त ही हर्षित हुए। उस समय उन्हों ने कबीर को दीक्षा दी और आशु कवि होने का शुभ वर भी प्रदान किया कबीर ने उसी वकत निम्नलिखित दोहा बनाया और हाथ जोड़ कर गुरु को सुनाया और गुरु महाराज के वर को यथार्थ कर दिखाया।

कबीर साचा सतिगुरु मै मिलिआ, सबदु जो बाइआ एकु।
लागत ही भुइ मिलि गइआ, परिआ कलेजे छेकु।

कबीर का यह दोहा सुनकर स्वामी रामानन्द जी के हृदय में प्राचीन प्रीति जाग उठी, और प्रेम का सागर ठाठ

मारने लग पड़ा। कबीर को पुनः हृदय से लगाया और आशीर्वाद दिया और कहा ठहरो हम स्नान करलें पीछे तुम्हें राम जी का माहात्म्य सुनायेंगे।

स्वामी रामानन्द जी का उपदेश।

स्वामी रामानन्द जी स्नान करके पूर्व की ओर मुख करके बैठ गए और कबीर को सम्मुख बिठा कर राम नाम का माहात्म्य वर्णन करने लगे "हे तात्! राम पूर्ण ब्रह्म हैं वे विश्व के कर्ता और जगत् के भर्ता हैं उनका नाम विश्वम्भर है उनके रोम रोम में कोटि ब्रह्माण्ड हैं कोटि ब्रह्मा, कोटि महादेव, कोटि वरुण, कोटि कुबेर, कोटि यमराज, कोटि गन्धर्व, कोटि शेषनाग और कोटि गणेश उनके उत्पन्न किये हुए हैं। सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र और तारागण उनकी ज्योति से प्रकाश प्राप्त करते हैं।

खंड, मण्ड, ब्रह्माण्ड द्वीप उनके निर्माण किए हुए हैं।

चौदह भवन, तीनों लोक, पृथिवी, पाताल और आकाश उनके आश्रय स्थित हैं वे तेज पुञ्ज तथा तेज स्वरूप है यदि सहस्रों सूर्य एक दम प्रकट हो जायें तो भी उनके प्रकाश की समता की प्राप्ति नहीं कर सकते।

ब्रह्मा, ऋषि और मुनि वेदपाठ द्वारा उनकी स्तुति करते हैं वेद उनकी महिमा को नहीं पा सकता और नेति नेति कह कर मूक हो जाता है वे सर्व व्यापक घट घट वासी सर्वान्तर्यामी और सर्वज्ञ है।

उनके दो स्वरूप हैं एक निर्गुण दूसरा सगुण।

निर्गुण स्वरूप तो निराकार, अवर्ण, निर्लेप, निर्विकार और एक रस रहने वाला है और सगुण स्वरूप वह रूप है जो भक्तों की रक्षा के लिए भगवान् आवश्यकतानुसार धारण करते हैं। जब जब धर्म की ग्लानि होती है और अधर्म की

वृद्धि होती है और दुष्ट लोग भक्तों पर अत्याचार करते हैं तो धर्म की स्थापना करने के लिए और दुष्टों का वध करने के लिए भगवान युग युग में प्रकट होते हैं और शङ्ख, चक्र, गदा पद्म धारण करके भक्तों को चतुर्भुज स्वरूप दिखा कर अन्तर्धान हो जाते हैं। उनके अवतारों की गणना नहीं हो सकती किन्तु २४ अवतार प्रसिद्ध हैं उन में भी दस अवतार मुख्य हैं उनके नाम मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्की हैं।

राम जी के नाम का प्रभाव श्री महादेव जी जानते हैं वह हर वकत इस "राम" नाम महामन्त्र का जाप जपते रहते हैं "राम-राम" के दो अक्षर 'र' और 'म' आनन्द दाता हैं और श्रावण भादों के महीने के समान हैं रकार (ॱ) छत्र और मकार (ं) मुकुट मणि के समान समस्त वर्णों के ऊपर विराज कर शोभा पाते हैं। यदि कोई पुरुष अपना कल्याण चाहने की इच्छा रखता हो और भीतर बाहर उजाला करने की लालसा रखता हो तो उसे चाहिये कि राम नाम के मणि रूपी दीपक को जिह्वा रूपी देहरी द्वार पर रखे। योगी लोग नाम जप के सिद्धि को प्राप्त होते हैं। जो पुरुष गूढ़ गति जानना चाहते हैं वे राम नाम का जाप करके ही मनोरथ सिद्ध करते हैं। जो साधिक मन लगाकर नाम जपते हैं उन को अणिमा आदिक सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। राम जी संकट निवारण कर देते हैं राम जी के चार प्रकार के भक्त हैं (जिज्ञासु, साधक आर्त और ज्ञानी॥ चारों पुण्यात्मा उदार और निष्पाप होते हैं चारों युगों (सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलि) में नाम का प्रभाव प्रकट है वेदों में युग युग के धर्म लिखे हैं कलियुग विशेषकर राम नाम ही जीव के उद्धार का साधन माना गया है। जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं से रहित होकर राम भक्ति

रस में लीन हो गए हैं उन्होंने राम के प्रेम रूपी जल कुण्ड में अपना मन मीन बना रक्खा है" ब्रह्म के निर्गुण और सगुन स्वरूपों से जो अकथनीय और अनूपम है नाम बड़ा है राम जन्म जन्मातरों के पापों को नष्ट कर देता है यदि किसी कुल में एक भक्त उत्पन्न हो जाए तो वह इक्कीस वशों का उद्धार कर डालता है। राम नाम के प्रभाव से शिव जी महाराज अविनाशी हो गए हैं श्री शुकदेव जी, सनकादिक नारद आदि राम नाम के जाप से अमर हो गए हैं ध्रुव को अटल पदवी केवल राम नाम के जपने से ही मिली है दैत्य-पुत्र प्रह्लाद राम के जाप से भक्त शिरोमणि हुए हैं राम नाम स्मरण करने से विभीषण पवनसुत और जामवन्त ने अचल पद को प्राप्त किया है राम नाम के प्रभाव से अजामिल पापी और गणिका ने उत्तम गति को पाया है।

"राम" यह परमेश्र के हजारों नाम लेने के बराबर है राम नाम के महात्म्य को शिवजी महाराज जानते हैं शिव जी महाराज ने राम चरित्र वर्णन किया था और पार्वती को सुनाया अतः महादेव जी ने काकभुशंड को अधिकारी जान कर रामभक्ति का दान किया काकभुशंड से याज्ञवलक्य मुनि ने प्राप्त किया याज्ञवलक्य जी से भरद्वाज जी ने प्राप्त किया और अब हम ने तुम को अधिकारी समझ कर यह गुह्य ज्ञान दिया है तुम इस गुप्त महामन्त्र को न भूलना और सर्वदा यदि रखना। खाते पीते सोते जागते, उठते बैठते हर समय राम जी को याद रखना।

पूर्व जन्म में तुम से अपराध हो गया था इसलिए तुम ने यह दूसरा जन्म धारण किया है और उसने तुम्हारा चौरासी लाख योनि का चक्र रोक दिया है और शीघ्र ही काशीधाम में तुम्हारा जन्म दिया है। इस शरीर को पाकर समय वृथा

न नष्ट करना स्वयम् भी राम जी का नाम जपना और दूसरों को भी राम नाम जपने का उपदेश करना और यदि बन सके तो राम नाम का महत्व प्रकट करने के लिए कविता भी बनाना। तुम मेरे परम भक्त और शिष्य हो। वह राम नाम की महिमा का एक श्लोक तो जो शिव जी महाराज ने पार्वती जी को सुनाया था तुम्हें सुना कर उपदेश समाप्त करता हूं।

'राम रामेति रामेति रमे राम मनोरमे।
सहस्र नाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने॥

अब सूर्य भगवान् उदय होने वाले हैं तुम घर को जाओ और हम अपने स्थान को गमन करते हैं। कबीर नमस्कार करके घर आया और पिता को स्वामी जी से दीक्षा लेने का वृतान्त सुनाया। नेहरू को भी सुनकर आनन्द हुआ।

उसी दिन काशी भर में यह बात फैल गई कि रामानन्द जी न कबीर दास को दीक्षा दी है और शिष्य मण्डली में भी उस को प्रविष्ट कर लिया है। कबीर जी न विक्रमीय संवत् १०६१ के अषाढ़ मास में गुरुदीक्षा ली थी।

शिक्षा

कथा और सत्सङ्ग के उपरान्त श्री रामानान्द जी शिष्यों का प्रतिदिन संस्कृत और हिन्दी पढ़ाया करते थे उनकी एक बाकायदा पाठशाला थी जिसमें ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य लड़के पढ़ा करते थे, शिष्य हो चुकने के चन्द दिनों के बाद कबीर ने स्वामी जी से कहा "महाराज मेरी इच्छा विद्याध्ययन करने की है यदि आप मुझे हिन्दी पढ़ा दें तो आप की अत्यन्त कृपा होगी" श्रीरामानन्द जी ने स्वीकार कर लिया और उस को हिन्दी पढ़ाना शुरू कर दिया। पूर्व जन्म के शुद्ध संस्कारों के कारण थोड़े दिनों के अन्दर ही कबीर हिन्दी का एक अद्वितीय विद्वान बन गया।

फिर एक दिन रामानन्द जी ने उस के छन्द-रचना की रीति सिखा कर आज्ञा दी "कबीर तुम पद्य-रचना किया करो और परमात्मा की महिमा के शब्द बनाया करो और राम जी की स्तुति किया करो, तुम्हारी जिह्वा पर सरस्वती निवास करेगी और जो कविता बनाना चाहोगे हमारी कृपा से अनायास ही बना लिया करोगे। तुम्हारी कविता जगत् प्रसिद्ध कविता होगी और समस्त संसार उसे आदर की दृष्टि से देखेगा। तुम केवल हरिभक्त होकर प्रसिद्धि को न प्राप्त करोगे किन्तु तुम महाकवि की पदवी को भी प्राप्त करोगे।

कबीर जी ने उत्तर में कहा "गुरु महाराज! आप जो आज्ञा देते हैं मैं इसको शिरोधारण करता हूं, और मैं आज से प्रण करता हूं कि मैं मात्री भाषा हिन्दी की सेवा के लिये हर वकत तत्पर रहूंगा और अपनी कविता हिन्दी में ही किया करूंगा।"

मूर्ति का उपालम्भ।

कबीर की माता जिसका नाम मूर्ति था और उस का उपनाम नीमा था कबीर के काम न करने से असन्तुष्ट होकर और उसके वैष्णवों के से आचरण को अरुचिकर देख कर कबीर के सामने अपनी जिठानी और देवरानी से कबीर के आचरण की निन्दा की। कबीर जी पास बैठे मूर्ति की बातें सुन रहे थे उसी समय निम्नलिखित शब्द बना कर उच्चारण किया जिस को सुन कर माता चुप हो गई।

इस शब्द के प्रथम दो चरणों में तो माता का उपालम्भ है और शेष चरणों में कबीर का उत्तर है।

विलावल

निति उठि कोरी गागरि आनै लीपति जीउ गइओ।
ताना बाना कछू न सूझै हरि हरि रासि लपटिओ॥ १॥

हमारे कुल कउने रामु कहिओ ।
जब की माला लई निपूते तब ते सुख न भइओ ॥ १ ॥
रहाउ
सुनहु जिठानी सुनहु दिरानी अचरजु एक भइया ।
सात सूत इनि मुडीए खोए इहु मुडीआ किउ न मुइओ ॥२॥

कबीर का उत्तर

सरब सुखा का एकु हरि सुआमी ।
सो गुरि नामु दइओ ॥
संत प्रहलाद की पैज जिनि राखी
हरनाखसु नख बिदरिओ ॥ ३ ॥
घर के देव पितर की छोड़ी गुरु का सबदु लइओ ।
कहत कबीर सकल पाप खंडनु संत लै उधरिओ॥४॥४॥

किशोरावस्था

बाल्यावस्था के बाद कबीर किशोरावस्था को प्राप्त हुआ किन्तु उसने पैतृक कर्म करना बिलकुल न सीखा । वह नित्यम्-प्रति श्री रामानन्द जी के सत्सङ्ग में जाता और उनके उपदेशों को सुनता । लोग रामानन्द जी को गुरु करके मानते थे और उनका पूजन किया करते थे, वे कबीर के भी पूज्य गुरुदेव थे । श्रीरामानन्द जी महाराज जो कुछ उपदेश देते थे उसको कबीर बड़े ध्यान से सुना करता था और मन में धारण किया करता था । सत्संग से लौट कर वह घर को आता था और अपने माता पिता को भी सत्संग की बातें सुनाया करता था । जिस प्रकार वैष्णव लोगों का आचरण होता है कबीर ने भी अपना आचरण वैसा ही बना लिया, वह प्रातःकाल ही सोकर उठता और गंगा-स्नान करने चला जाता लौटते हुए गङ्गा-जल की गागर भर लाता और चौका लीपकर शुद्ध तथा निर्मल जल चौके में रखकर आप श्रीरामानन्द जी के सत्संग

में चला जाता और भजनोपदेश सुनता। सत्सङ्ग की समाप्ति पर घर को आता और अपने हाथ से रसोई तैयार करके भोजन करता।

गले में कण्ठी डालता और माथे पर वैष्णवों का सा तिलक लगाता और चित्त की वृत्तियों का निरोध कर के प्रभु के स्मरण में घण्टों समाधी लगाए बैठा रहता और समाधी त्यागने के पश्चात् परमात्मा के भजन गाया करता परन्तु घर का कोई काम-काज न किया करता।

कबीर का यह आचरण देखकर उस के सम्बन्धियों ने समझा कि कबीर बावला हो गया है। वे नेहरू को ताने देते और कहते कि तुम्हारा बेटा कोई काम-काज नहीं करता पागलों की भान्ति बैठा रहता है और किसी के साथ बात-चीत नहीं करता, साधुओं के पीछे मारा मारा फिरता रहता है। नेहरू लोगों की बातें सुनता तंग आ गया और एक दिन मौका पाकर बेटे से कहने लगा॥ "बेटा! न तो तुम मद्रसे में जाकर पढ़ते लिखते हो और न घर का कोई काम-काज करते हो बावलों की तरह आंख मूंदकर बैठे रहते हो। या स्वामी रामानन्द जी के पास बैठे रहते हो, देखो! यह हमारे सम्बन्धी मुझे उराहना देते हैं और कहते हैं कि तुम्हारा बेटा पागल हो गया है" बेटा ताना तना करो और कपड़ा बुना करो, यही हमारी आजीवका है यदि काम न करोगे तो हमारा गुजारा कैसे होगा? सम्बन्धियों के यहां आया जाया करो और उन के साथ प्रेम पूर्वक मिला करो॥

पिता की बातें सुनकर कबीर ने निम्न लिखित शब्द उच्चारण किया॥

बिलावल

बिदिआ न परउ बादु नही जानउ।

हरिगुन कथत सुनत बउरानो ॥ १ ॥
मेरे बाबा मै बउरा सभ खलक सैआनी मै बउरा ।
मे बिगरिओ बिगरै मति अउरा ॥ १ ॥

रहाउ

आप न बउरा राम किओ बउरा ।
सतिगुर जारि गइओ भ्रमु मोरा ॥ २ ॥
मै बिगरै अपनी मति खोई ।
मेरे भरम भूलउ मति कोई ॥ ३ ॥
सो बउरा जो आपु न पछानै ।
आपु पछानै त एकै जानै ॥ ४ ॥
अबहि न माता सु कबहु न माता ।
कहि कबीर राम रंगिराता ॥ ५ ॥ २ ॥

कबीर जी का यह शब्द सुनकर उसके माता-पिता तथा सम्बन्धी विस्मित हो गए और उन्होंने जान लिया कि यह सच्चा हरि-भक्त है ।

काशीमें हल चल ।

कुमार कबीर के इस प्रकार के आचरण से काशी में शोर मच गया कि एक कोरी का बेटा जिस का नाम कबीर है वैष्णवों का-सा आचार-व्यवहार रखता है । वह गले में कण्ठी पहनता है माथे पर तिलक लगाता है अपने हाथ से पवित्र रसोई बनाकर भोजन करता है । श्रीरामानन्द जी के सत्सङ्ग में जाता है राम नाम का जाप करता है और अन्य जुलाहों को भी राम नाम जपने का उपदेश करता है । और अपने आप को गोस्वामी रामानन्द जी का शिष्य बताता है

इसलिए काशी-निवासी ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य अचम्भित होकर उस को देखने के लिये आए क्योंकि यह आश्चर्य-जनक घटना थी कि शूद्र होकर वैष्णवों का वेष धारण करे और राम भक्ति में तन्मय होकर घण्टों समाधी लगाए रक्खे।

यहां पर यह बात भी बता देना अनुचित न होगा कि उस समय शूद्रों की कैसी अवस्था थी? उस समय शूद्रों की अत्यन्त शोचनीय अवस्था थी। हिन्दुओं ने उनको अछूत और दलित समझ कर परे फेंक दिया था। हिन्दू उनके साथ स्पर्श करना पाप समझते थे और उनके साया से डरते थे, उनको समाज में योग्य-स्थान देना अधर्म मानते थे इस भांति अनाड़ी तथा अदूरदर्शी हिन्दुओं ने जाति के एक आवश्यक अङ्ग को पृथक् करके हिन्दू-जाति को अङ्ग हीन सा बना दिया था।

शूद्र लोग धर्म से सर्वथा अनभिज्ञ थे और उन पर यवन सभ्यता का अधिक प्रभाव पड़ा हुआ था। जिस प्रकार पञ्जाब में हिन्दु सुनारों की एक खासी संख्या आगाखानी मत की अनुयायी है और उन पर आगाखानीय शिक्षा और आगाखानीय प्रचार के कारण यवन सभ्यता का रङ्ग चढ़ा हुआ है ये लोग अपने नाम दो प्रकार के रखते हैं एक हिन्दुओं का सा और दूसरा मुसलमानों का सा। वे नमाज़ नहीं पढ़ते किन्तु ईद बकरीद को मानते हैं ठीक इसी तरह से उस समय शूद्र जातियों पर यवन-सभ्यता ने अपना प्रभाव डाला हुआ था और शूद्र लोग प्रायः यवनों की तरफ झुकाव रखते थे। इसलिए कबीर के वेष और आचरण में परिवर्तन का होना काशी-निवासियों के लिए एक नवीन सी बात थी। अतः वे इकट्ठे होकर और एक यूथ सा बना कर नेहरू कोरी के घर में आए। देखा कि एक लीपे पीते चौके में बैठा हुआ

कबीर भोजन कर रहा है।

इनको देखकर कबीर मौन हो रहा और उस समय तक कुछ न बोला जब तक उस ने भोजन खाना समाप्त कर के कुल्ला न कर लिया। चौके के बाहर आकर कबीर ने उन सब को "जय रामजी की" कही और उनको बैठने के लिए भी कहा। वे सब के सब एक चौतरे पर बैठ गए तो कबीर जी ने हाथ जोड़ कर उन से कहा "आज आप लोगों ने अत्यन्त कृपा की है जो मेरी कुटी में पधार कर दर्शन दिए हैं कहिए क्या आज्ञा है॥"

तब उनके मुखिए ने कहा "हम ने सुना है कि तुम कोरी के बेटे होकर वैष्णवों का सा आचरण रखते हो और राम के नाम का जाप करते हो तुम्हे ऐसा करना योग्य नहीं" कबीर ने उत्तर दिया 'वैष्णवों के आचरण रखने में क्या हानि है? और राम नाम जपने में क्या दोष है?' मुखिये ने फिर कहा "यह द्विजों का आचरण है शूद्रों को ऐसा आचरण रखना शोभा नहीं देता।"

कबीर ने उत्तर दिया "शुद्धि और पवित्रता रखना मनुष्य-मात्र का परम-धर्म है। वैष्णवों की सात्विक-वृत्ति होती है और दूसरे लोगों की तामसिक-वृत्ति होती है। चौके को लीपकर भोजन तैयार करने और चौके में ही बैठकर खाने से चित्त शान्ति को प्राप्त होता है मन पवित्र होता है हृदय में सात्विक भावों का आविष्कार होता है और मन अच्छी तरह से ईश्वर के चरणारबिन्द में जुड़ जाता है॥

राम नाम का जाप करने से जन्म जन्मान्तरों के कलुष नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य आवागमन के चक्कर से छूटकर अन्त में परम पद को प्राप्त होता है राम नाम का बड़ा भारी महात्म्य है। कहने में तो "राम" केवल दो अक्षरों का शब्द है

किन्तु इस का माहात्म्य कोई वर्णन नहीं कर सकता। देखने में भी दो अक्षर हैं पर महत्व में इस महामन्त्र के समान कोई मन्त्र नहीं। स्वयम् काशीनाथ श्रीशंकर महाराज "राम" के नाम का जाप करते हैं।

महाराज! मैं तो रामजी के भक्तों के सेवकों का भी सेवक हूं यदि कोई आदमी स्वप्न के भीतर राम का नाम उच्चारण करे तो मेरे निकट वह पूजा के योग्य है। मैं उस पर अपना शरीर भी निछावर करने के लिए तैयार हूं।" इतना कह कर कबीर ने उसी समय निम्न लिखित दोहा पढ़ा।

कबीर सुपनेहूं बरड़ाई कै जिह मुख निकसै राम।
ताके पग का पानही मेरे तनु का चाम॥

कबीर का युक्ति से युक्त उत्तर सुनकर सब लोग निरुत्तर हो गए और अपना-सा मुंह लेकर चले गए॥

पैतृक कर्म

एक दिन कबीर भजन कीर्तन करने के पश्चात् पिता के पास आ बैठा और कहा "पिता जी मैं आपको सहायता देना चाहता हूं" नेहरू ने देखा कि बेटे का चित्त काम करने को चाहता है उसने कपड़ा बुनना छोड़ दिया और अपनी जगह पर बेटे को बिठा दिया। तन्तुवाय का काम कोई इतना कठिन तो था नहीं जो कबीर को न आता कबीर बड़ा बुद्धिमान था। झट सारा काम सीख लिया और नेहरू से कहा। "पिता जी जब जब मुझे अवकाश मिला करेगा मैं ताना तनने और कपड़ा बुनने में आप को मदद दिया करूंगा।

कबीर के जीवन में यह परिवर्तन देख कर पिता ने ईश्वर का धन्यवाद किया और उसने समझा कि कबीरदास अब अवश्य ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश करेगा। इस लिए मेरे

सम्बन्धी जो इस पर निकम्मा होने का दोष आरोपण करते हैं वह दूर हो जायेगा ॥

इस प्रकार कबीर जिस समय अपने नित्य-कर्म से अवकाश पाता, पिता के पास आ जाता और पैतृक-कर्म कर के पिता की सहायता करता ॥

विवाह ।

इस प्रकार हरि-भजन करते और सत्सङ्ग करते करते कबीर युवावस्था को प्राप्त हो गया और उसका विवाह भी बनखण्डी बैरागी की पालिता कन्या लोई के साथ सं० १४७१ विक्रमी में हो गया ।

लोई बड़ी सुन्दर और रूपवती था । वह पतिव्रता और आज्ञाकारिणी स्त्री थी उसने एक बुद्धिमान पिता से शिक्षा प्राप्त की हुई थी इसलिए वह सुशिक्षित और सुघड़ थी । वह घर के काम काज में निपुण थी । श्वसुरालय में आकर उसने घरका सारा प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया और श्वसुर तथा श्वश्रू की सेवा करना उसने अपना मुख्य कर्त्तव्य जाना । और पति सेवा को परम धर्म समझा ।

सन्तति ।

गृहस्थाश्रम के नियमानुसार कबीरदास के घर सम्वत् १४८१ विक्रमी को लोई के उदर से प्रथम एक लड़का उत्पन्न हुआ जिसका नाम नेहरू ने कमालदास रक्खा ।

तीसरे वर्ष के पश्चात् लोई को फिर गर्भ हुआ और सम्वत् १४८५ में एक कन्या पैदा हुई जिस का नाम कमाल देवी रक्खा गया ।

पुत्र और पुत्री के उत्पन्न हो चुकने के बाद कबीरदास जी ने गृहस्थ करना छोड़ दिया इसलिए उनके यहां फिर कोई बाल बच्चा पैदा न हुआ ।

नेहरू की मृत्यु।

कमाली के जन्म लेने के कुछ दिन पीछे नेहरू जिसका उपनाम मुकता था स्वर्गवास हो गया और कबीर अनाथ रह गया।

श्री रामानन्द जी का वैकुण्ठ गमन

एक दिन ऐसा आया कि स्वामी रामानन्दजी ने इस आसार संसार से मुखमोड़ कर परलोक गमन करने की ठानी। समस्त देशों में चिट्ठियां भेजी गईं और उनके भक्तों को सूचना दी गई कि अमुक तिथि को स्वामी रामानन्द जी महाराज वैकुण्ठ गमन करना चाहते हैं जब निश्चित तिथि का प्रवेश हुआ तो उन्होंने शिष्योंको कहा "आज हम परलोक गमन करना चाहते हैं तुम लोग हमारे पीछे किसी प्रकार का रुदन न करना और कबीर जी को आज्ञा दी कि तुम काशी धाम में सत्संग बनाए रखना और कलि से संतप्त मनुष्यों को हरि-कीर्त्तन सुना सुनाकर शान्ति प्रदान करते रहना।" इतना कह कर स्वामी जी ने अपने श्वासों को दशम द्वार में चढ़ा लिया और समाधी लगा कर बैठ गए। थोड़े समय के पश्चात् उनका आत्मा ब्रह्मरन्ध्र को फोड़कर वैकुण्ठ को जाता हुआ दिखाई दिया और इस ज्योति को सब उपस्थित लोगों ने देखा।

साधु-सेवा

श्री रामानन्द जी के बैकुण्ठ गमन करने के पश्चात् कबीर जी न अपने घर पर सत्सङ्ग लगाना शुरू कर दिया और राम भक्ति का प्रचार करना अपना मुख्य कर्त्तव्य समझ कर दिन रात हरि कीर्तन करने प्रारम्भ कर दिया। और साधु महात्माओं के लिये भोजन शाला भी खोल दी। हर वक्त उनके घर साधुओं और हरिभक्तों की भीड़ लगी रहती थी वह भोजन भी कबीर के यहां करते थे और हरिकीर्तन का भी आनन्द

लूटते थे जो कुछ कबीर कमाते वह साधु अभ्यागतों को खिला देते थे और शेष कुछ भी नहीं रखते थे।

नीमा का विलाप

कबीर जी को सत्सङ्गति का ऐसा आनन्द आया कि वे हरि कीर्त्तन को छोड़ कर संसार का कोई और कार्य करना ही न चाहते थे एक बार हरि प्रेम में ऐसे मग्न हुए कि निरन्तर सात दिन भजन कीर्तन सुनते रहे और घर का कोई काम काज न किया घर का प्रबन्ध बिगड़ गया और बाल बच्चे भूखे मरने लगे तो माता नीमा अत्यन्त दुखी होकर विलाप करने लगी हे भगवान्! कबीर तो भजन में निमग्न है बच्चों की पालना कैसे होगी ? और हमारी जीविका कैसे चलेगी ? उस के विलाप को सुनकर कबीर जी ने कहा "माता ! तू क्यों सोच करती है ? रघुनाथ जी स्वयम् प्रबन्ध कर देंगे मैं तो उनके आश्रय पड़ा हूं। और उन के नाम को एक क्षणभर भी नहीं भुलाना चाहता इतना कह कर माता के विलाप और अपने उत्तर का शब्द बना कर माता को सुनाया जिस को सुन कर नीमा चुप हो गई।

[कबीर की माता का पश्चाताप और कबीर का उसको धैर्य देना]

गूजरी घर ३

मुसि मुसि रोवै कबीर की माई।
एह बारिक कैसे जीवै रघुराई ॥ १ ॥
तनना बुनना सभि तजिओ है कबीर।
हरि का नामु लिख लीओ शरीर ॥ १ ॥
रहाउ
जब लग तागा बाहउ बेही।
तब लगु विसरै राम सनेही ॥ २ ॥

ओछी मति मेरी जाति जुलाहा।
हरि का नामु लहिओ मैं लाहा ॥ ३ ॥
कहत कबीर सुनहु मेरी माई।
हमारा इनका दाता एक रघुराई ॥ ४ ॥ ३ ॥

श्री कृष्ण भगवान् आदि पुरुष हैं।

एक समय कबीर जी वृन्दावन में गए वहां के लोग श्री कृष्ण भगवान् का स्मरण नन्दनन्दन नामी विशेषण द्वारा किया करते थे कबीर जी सत्सङ्ग लगा कर सदोपदेश कर रहे थे कि एक ब्राह्मण आकर मिला उसने भी कबीर जी को "जय नन्द नन्दन की" कही और कहा "भक्त जी। आप भी नन्द नन्दन का जाप किया करें" कबीर जी ब्राह्मण की बात सुन कर कुपित हो गए और श्री मुखारविन्द से कहा तुम लोग श्री कृष्ण भगवान् का महत्व नहीं जानते, भगवान् को तुम एक साधारण मनुष्य का बेटा समझ कर स्मरण करते हो यह तुम्हारी भूल है। श्री कृष्ण भगवान् आदि पुरुष हैं वे पुराण पुरुषोतम हैं वे सनातन हैं वे अजर हैं वे अमर हैं वे विश्व के कर्ता हैं वे ब्रह्माण्ड के उत्पन्न करने वाले हैं न तो उनकी कोई माता है और न उनका कोई पिता है वे अच्युत हैं वे अविनाशी हैं वे जन्म मरण से रहित हैं वे अयोनि हैं वे निर्वैर हैं, वे सर्वान्तर्यामी हैं वे घटघटवासी हैं उनको तुम केवल नन्द का बेटा मान रहे हो और उनके महत्व को नहीं समझते नन्द बेचारा तो अल्पज्ञ जीव है वह भगवान् का पिता कैसे हो सकता है?

कथा।

त्रेता युग में नन्द का जन्म रघुवंश में हुआ था उस समय उसका नाम बीरसिंह था और उसकी स्त्री का नाम

रतिनालिका था। वीरसिंह महाराज दशरथ का सम्बन्धी था, जिस समय रामावतार हुआ था वीरसिंह सपरिवार अयोध्या में निवास करता था। भगवान् रामचन्द्र जी जब शैशावस्था में थे तो एक दिन बीरसिंह और रतिनालिका महाराणी कौशल्या से मिलने आए। श्री रामचन्द्र जी अङ्गन में खेल रहे थे उनकी बाल-लीला को देख कर वीरसिंह और रतिनालिका का मन मोहित हो गया और उन दोनों के चित्त में तीव्र इच्छा हुई कि भगवान् हम भी आप की बाल लीला को अपने अंगन में देखना चाहते हैं आप हमारे घर में पुत्र रूप होकर अवतार लें। और बाल-लीला दिखा कर कृतार्थ करें॥ उनके मन के शुद्ध भाव जानकर आकाश बाणी हुई यदि हमारी बाल लीला देखने की तुम्हें इच्छा है तो तपस्या करो यदि तुम्हारा तप दशरथ कौशल्या जैसा हुआ तो द्वापर में कृष्णावतार लेकर तुम्हें बाल लीला दिखाएँगें। वह वर प्राप्त करके वीरासिंह और रतिनालिका ने अनेक जन्म तपस्या की और चौरासी लाख योनियों का चक्कर काट कर द्वापर युग में नन्द और यशोदा बने इस जन्म में भी भगवान् की अनन्य भक्ति की और भक्ति करते वृद्ध हो गए। उन की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान् ने कृष्णावतार होकर नन्द-यशोदा को बाल लीलाएं दिखाईं बारह वर्ष पर्यन्त श्री कृष्णचन्द्र जी ने उनको लीलाएं दिखा कर उनके चित्त को हर्षित किया। नन्द के तो उत्तम भाग्य समझो जो नारायाण ने भक्ति के वश में होकर अवतार लिया तुम जो श्री कृष्ण को नन्द नन्दन कहते हो बताओ नन्द किस का पुत्र है? नन्द अर्जुन का बेटा है अर्जुन का पिता अक्षयार्जुन है अक्षयार्जुन घरार्जुन की सनतान है घरार्जुन तरार्जुन का पुत्र है इसी प्रकार नन्द का वंश-वृत्त ईश्वर से जा मिलता

है ईश्वर सत्त चित्तानन्द स्वरूप और अनादि है।

जिस समय न तो पृथ्वी थी न आकाश था और न दिशाएँ थीं उस समय नन्द कहां था नन्द तो द्वापर युग में हुआ है और परमात्मा तो सदैव काल रहने वाले हैं। वह निरंजन निर्लेप और निर्विकार है उनका शत्रु और मित्र कोई नहीं है तुम लोग श्री कृष्ण भगवान् को संकुचित भाव से मानते हो उनका माहात्म्य नहीं जानते वे पूर्णब्रह्म परमात्मा है इतना कह कर कबीर जी ने निम्नलिखित शब्द उच्चारण किया जिसको सुन कर सब लोगों का भ्रम दूर हो गया और भविष्य में नन्द नन्दन न कहने की प्रतिज्ञा की।

गउड़ी

लख चउरासीह जिअ जोनि महि भ्रमत नन्द बहु थाका रे।
भगति हेति अवतारु लिओ है भागु बड़ो बपुरा को रे ॥ १ ॥
तुम जो कहत हउ नन्द का नंदनु नंद सु नंदनु का को रे।
धरानि अकाशु दिसो दिशि नाहीं तब इह नंद कहा थो रे ॥ १॥

रहाउ

संकटि नहीं परै जानि नहि आवै नामु निरंजन जाको रे।
कबीर को सुआमी ऐसो ठाकुर जा के माई न बापो रे ।२।१६।२०

प्रचार।

कबीर जी ने वैष्णव मत का खूब प्रचार किया काशी में रह कर और काशी से बाहर जाकर अनेक बार लोगों को सदोपदेश दिये इस प्रकार कबीर जी ने गुरु की आज्ञानुसार हरिकीर्तन का चर्चा घर घर में करा दिया।

भगवान् का दर्शन।

कबीर जी परम भक्त थे और वे सच्चे हृदय के साथ परमात्मा की भक्ति किया करते थे, निष्काम भक्त थे उनको

किसी फल की इच्छा न थी किन्तु भगवान् ने उनको भक्ति से प्रसन्न होकर अनेक बार दर्शन दिये थे और उनकी आपत्तियों को दूर किया था एक बार भगवान् ने श्वान रूप धारण करके उनको दर्शन दिया जिसका वर्णन निम्न लिखित है।

बसन्त।

सुरह की जैसी तेरी चाल। तेरी पूंछटि ऊपरि झमक बाल॥१॥
इस घर महि है सु तूं ढूंढि खाहि।
अउर किसही के तू मति ही जाहि॥१॥

रहाउ

चाकी चाटहि चून स्वाहि।
चाकी का चीथरा कहां लै जाहि॥ २॥
छीकै पर तेरी बहुत डीठी।
मतु लकरी सोटा तेरी परै पीठि॥३॥
कहि कबीर भोग भले कीन।
मति कोई मारै ईंट ढीम॥४॥

गंगा में फेंकना।

बहलोल लोधी का बेटा सिकन्दर लोधी देहली के तख्त पर बैठा और भारतवर्ष की यात्रा को निकला सं ०१५४५ वि० को वह काशी जी में आया, शैख तक्की आदिकों ने कबीर के विरुद्ध शिकायत की कि कबीर खुदा को नहीं मानता और अपने आप को खुदा कहता है बादशाह ने कबीर को जंजीरों से बन्धवाकर गंगा में फेंकवा दिया किन्तु ईश्वर की कृपा से वह बच गया और गंगा से बाहर आकर निम्नलिखित शब्द उच्चारण किया।

भैरव।

गंग गुसाइन गहिर गंभीर। जंजीर बांधि करि खरे कबीर॥१॥

मनु न डिगै तनु कहि कउ डराइ। चरनकमल चितु रहिओ समाइ॥१ रहाउ

गंगा की लहिर मेरी टुटी जंजीर। म्रिगछाला पर बैठे कबीर॥२॥
कहि कबीर कोउ संग न साथ। जल थल राखन है रघुनाथ॥२॥

हाथी के पांव तले रोदना। ३।१०।१८

जब कबीर गंगा में डूबने से बच गया तो बादशाह ने मस्त हाथी कबीर पर छोड़ा हाथी को शेर की शकल नजर आई और वह चीखता चिल्लाता हुआ भाग गया और कबीर बच गया।

गोंड कबीर।

भुजा बांधि भिला करि डारिओ
हसती कोपि मूंड महि मारिओ।
हसति भागि कै चीसा मारै
इआ मूरति कै हउ बलि हारै॥१॥
आहि मेरे ठाकुर तुमरा जोरु।
काजी बकवो हसती तोरु॥१॥
... ... ॥४॥१॥४॥

यज्ञ

कबीर की कीर्ति को सहन न करके काशी के चन्द एक ब्राह्मणों ने कबीर की ओर से देश देशान्तरों में झूटी चिठी-यां भिजवा दीं कि "अमुक तिथि को हमारे यहां एक महान यज्ञ होगा आप लोग अवश्य दर्शन देकर कृतार्थ करें" सूचना दी हुई नियत तिथि पर सहस्रों स्त्री पुरुष कबीर जी के घर भोजन करने के लिए आ गए कबीर जी को तो खबर ही नहीं थी और न उन्हों ने निमन्त्रण भेजे थे इस के अतिरिक्त उन के घर में इतने लोगों के खिलाने के लिए सामान भी नहीं था इस लिए कबीर जो शोच में पड़ गए जब कोई प्रबन्ध

होता नजर न आया तो वेष बदल कर बन में जा बैठे। इधर परमात्मा ने देखा कि लोगों को अन्न न मिलने से कबीर का अपयश होगा। स्वयम् कवीर का वेश धारण करके कबीर के घर में आए और हलवाइयों को बुलाकर नाना प्रकार के पकवान और भोजन बनवा कर साधु, ब्राह्मणों और अभ्यागतों को खिलाए लोग खाकर तृप्त होते जाते थे और कबीर का यश गायन करते जाते थे। वन में किसी आदमी ने कवीर को मिल कर कहा आप धन्य हैं जिन्होंने इतना महान यज्ञ रचा है और सब को प्रसन्नता के साथ भोजन खिला कर तृप्त कर दिया है यह बात सुनकर कबीर जी नगर को लौटे तो लोगों ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा कि आप ने बड़ा उत्तम यज्ञ रचा है जिसको सुन कर कबीर जी ने यह दोहा पढ़ा—

कबीर न हम कीआ न करहिगे न कर सकहि सरीर।
कीआ जानउ किछु हरि कीआ भइओ कबीरु कबीरु॥

कबीर जी सारी उमर राम नाम का प्रचार करते रहे और लोगों का भ्रम दूर करते रहे निदान उनके देहान्त का समय निकट आ गया। वे काशी को छोड़ मगहर में चले आए

मृत्यु।

वे काशी में शरीर त्यागना नहीं चाहते थे वे कहते थे कि काशी में शरीर त्यागने से तो प्रत्येक मनुष्य को मुक्ति मिल जाती है हम मगहर में शरीर त्यागेंगे। चुनांचि मगहर में आकर उन्होंने काशी त्याग पर निम्नलिखित शब्द उच्चारण किया।

गौड़ी

जिउ जल छोडि बाहरि भइआ मीना।
पूरब जनम हउ तप का हीना॥ १॥

अब कहु राम कवनि गति मोरी ।
तजीले बनारस मति भई थोरी ॥ १ ॥
... ... ॥ ५ ॥ १६ ॥

कुछ दिनों के पश्चात् अपना शरीर छोड़ दिया । उन की मृत्यु के समय पर हिन्दू और मुसलमानों में झगड़ा हो पड़ा । हिन्दू उनके शव को जलाना चाहते थे और यवन दबाना चाहते थे अन्त में जब उन्होंने शव पर से चद्दर उठा कर देखा तो वहां शव न था किन्तु सुगन्धित पुष्पों का एक ढेर लगा हुआ था आधे पुष्प हिन्दुओं ने लेकर समाधी बना दी और आधे मुसलमानों ने लेकर दबा दिए उनकी मृत्यु की तिथि मंगसिर सुदि एकादशी संवत् १७५ विक्रमी है ।